धन्यवाद !

इस अमूल्य पुस्तक में धर्मज्ञ सज्जनों ने निम्न प्रकार सहायता दी है। उन्हें कोटिश धन्यवाद है।

२१) श्रीमान सेठ सोहनलाल जी जैन ठि० सेठ कन्हैयालाल जी भोलानाथजी जैन टकसाली जोहरी बाजार जैपुर राजपूताना

११) " , "

११) श्रीमान लाला रामलाल जी श्योलाल जी नं० १ चीनी पट्टी बड़ाबाजार कलकत्ता।

११) श्रीमान लाला झम्मनलाल जी जैन, कामां (राज्य भरतपुर)

१०) श्री० जैन पञ्चान सुलतानपुर पोस्ट चिलकाना जिला सहारनपुर मार्फत लाला दर्शनलाल जैन जमींदार।

५) श्रीमान लाला प्यारेलाल जी कन्हैयालाल जी जैन कुमार बिल्डिङ्ग कानपुर।

५) श्रीमान डाक्टर भाईलाल जी कपूरचन्द जी शाह जैन रजामृत औफिस मु० नार जिला कैरा।

४॥) श्रीमान जैन पञ्चान मु० गिरीडी जिला हजारीबाग बंगाल मारफत लाला बद्धाभाईजी।

५) श्रीमान लाला जुहारमल जी सहसमलजी मेवाड़ी बाजार ब्यावर राजपूताना।

३) श्रीमान बाई साँकली बाई जी पुन्य मातुश्री शाह लल्लूभाई जे रायचंदजी जैन मु० मोडासा जिला अहमदाबाद।

४०) श्रीमती दिगम्बर जैन धर्मप्रभावनी सभा साँभर लेक राजपूताना मा० सभापति द्वारकाप्रसाद जैन।

५) ब्याज खाते के जमा।

५१) श्रीमती रतनप्रभादेवी और दाते इ दत, सुपत्रों व सपुत्र द्वारकाप्रसाद जैन C. K. हाथरस।

१८२॥) जोड़

समाज सेवक—

द्वारकाप्रसाद जैन हाथरस।

श्रीवीतरागायनमः ॥

श्री परमात्मने नमः श्री ऋषभ—महावीर देवायनम ॥

अहिंसा परमोधर्मः यतो धर्म ततो जय ।

धर्मात्माओं के बिना धर्म अन्यत्र कहीं नहीं पाया जा सकता।

भूमिका—उद्देश्य ।

प्रायः ऐसा देखने में आता है कि किसी २ नगर में कुछ जैन जाति के बांधव व बहिनें, पटकर्म व धर्म मार्ग को स्मरण न कर किसी २ बातों में अन्यथा वरतते हैं जिससे धर्म के आयतनों पर कुछ आक्षेप व विघ्न अवसर हो जाता है और उसके अतिरिक्त शास्त्र भंडारों के दर्शन तक कठिन हो जाते हैं। स्वाध्याय का तो कहना ही क्या! प्रिय सज्जनों! कृपया सोचिए कि हमारे आचार्यों ने कितना परिश्रम और करुणा कर कैसे २ महान ग्रंथ रचे हैं। और महत पुरुषों ने परिश्रम व लाखों रुपया खर्च कर, परिपाटी चलाते आए हैं। अफसोस! आज हमारे भाई व पंच कहलाकर जैन मंदिरों पर विघ्न व उसके उन्नति बाधा डालते हैं और जिन आगमों के दर्शन तक नहीं करते कराते। लेकिन जीर्ण कर अविनय करते हैं या यों कहिए कि सदा के लिए जलांजलि दे रहे हैं। इससे महा अशुभ कर्मों का आश्रव होता है। क्या अमूल्य जैन धर्म व शास्त्र कम नहीं होते हैं? इन सब बातों का कारण सोचा जाय तो यही कह सकते हैं कि शास्त्रज्ञान नहीं, या स्वाध्याय प्रवृति नहीं, या क्या शक्ति अनुराग और विचार नहीं, अथवा प्रमादी बन रहे हैं।

२—द्वितीय हमारे बहुत से अजैन बांधव जैन धर्म या उसके उसूलों को न जानकर, जैन धर्म या जैनियों को किसी २ बातों पर निंदा करते हैं और जैन सम्प्रदाय, उनको जैन धर्म का स्वरूप बताने में प्रमादी है अथवा बता नहीं सकते हैं, इन्हीं कारणों से किसी २ स्थान पर हमारे अजैन बांधव, जैनियों के धार्मिक कार्य व उत्सवों पर हर्ष और पुण्य संचय न करते हुए, विघ्न का कारण पैदा कर देते हैं। हमारा अजैन समाज से नम्र निवेदन है कि वे जैनियों से मित्रता कर जैन मंदिर में नित्य जावें और जैन धर्म से लाभ उठावें।

३—इन्हीं अशुभ कारणों को दूर करने के लिए, यह अमूल्य पुस्तक प्रकाशित की है ताकि स्वाध्याय प्रचार और धर्म प्रभावना द्वारा, अन्त में मोक्ष सुख लाभ प्राप्त करें।

द्वारकाप्रसाद जैन C K.

निवेदन ॥

प्रिय बंधुवर्गों ! यह अमृतधारा रूपी धर्मोपदेश बड़े परिश्रम से प्रकाश कर आप भाइयों के कर कमलों में भेंट करता हूं । आशा है कि आप धर्मज्ञ मुझ मंद बुद्धी पर क्षमा भाव रखते हुए जैन अजैन समाज में धर्मोन्नति करेंगे । इस पुस्तक से धर्मोपदेश समय प्रथम सिद्धों, विदेह क्षेत्र के विद्यमान तीर्थंकरों, और तीन लोक के कृत्तिम अकृत्तिम चैत्यालयों को नमस्कार कर, एक णमोकार मंत्र की जाप और निम्न मंत्र की २१ बार जाप देकर व्याख्यान शुरू करने की कृपा करें ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कीर्ति मुख मंदरे कुरु कुरु स्वाहा ।

१-इसको अविनय करने या रद्दी में डालने से, पापास्रव होगा ।
पढ़ने व नित्य सब को सुनाने से, सदा मङ्गल होगा ॥

३-यदि अविनय व रद्दी का कारण हो, तो किसी जैन मंदिर या अन्य भाई को दे देने की कृपा करें ।

४-भारत में प्रत्येक जैन मंदिर में, एक चौकी पर यह पुस्तक हर वक्त विराजमान रहे ताकि दर्शक पढ़ सकें । ऐसे प्रबंध की मैं प्रार्थना करता हूं ।

५-भारत के प्रत्येक लाइब्रेरी, वाचनालय, संस्था, पाठशाला, जैन मंदिर इत्यादि २ में यह पुस्तक रक्खी जाने का मैं प्रस्ताव करता हूं ।

६-यह प्रत्येक मनुष्य व स्त्रीको विचार रहे कि जो तीनलोक के शिखर पर, सिद्ध भगवान, परमात्मा, ईश्वर, खुदा मौजूद हैं तथा विदेह क्षेत्र में केवली भगवान, उनके ज्ञान में, हमारे सर्व प्रकार के कार्य झलकते हैं । इस लिए हम लोगों को सोच विचार कर शुभ और न्याय पूर्वक कार्य करना उचित है ताकि बुराइयों से बचें । कहावत भी है कि "भाई अकेले में भी यदि कोई साक्षी नहीं है तो ईश्वर, परमात्मा, खुदा, तो साक्षी है वह तो देखता है'

७-जो कोई, किसी विषय पर मुझ से पत्र व्यवहार करना चाहें, तो निम्न पते पर कर सकते हैं ।

समाज हितैषी——

द्वारकाप्रसाद जैन, C. K.

पोस्टमास्टर भरतपुर शहर—(राजपूताना)

शुद्ध सूचना पत्र ।

(पुस्तक पढने से पहले ठीक कर लेवे)

पत्र नं०	पंक्ति नं०	अशुद्ध	शुद्ध
१	हिंदी ७	फर्मांबरदार	वफादार
४	१०	Fxecutive	Executive
७	५	श्रशठि	श्रेशठि
८	१२	स	से
१३	२२	इषयह	यह यह
१५	१	संख्यात	सख्यात
२५	७	Structure	Structural
,,	,,	Enginere	Engineer
२८	१४	कथलज्ञान	केवल ज्ञान
३९	१७	भेंदिर	मँदिर
४०	११	भोलो	भोलों
,,	२७	वदनाओ	वेदनाओ
४३	१	स्पश	स्पर्श
४५	२५	अपन	अपने
४८	७	प्रकृत	प्राकृत
,,	२९	के	कि
४९	२	स्वरू	स्वरूप,
,,	३	नपु सक	नपुंसक
,,	१७	गुणानवाद	गुणानुवाद
५०	११	नर्मल	निर्मल
,,	२८	ओर	और
५१	११	दवे	देते
,,	,,	कामा	कामों
,,	१३	ससारी	संसारी
,,	१८	ह	है
,,	२४	उपक	उनके
,,	२६	क	फ
,,	,,	नग	नग्न
,,	२७	दखने	देखने
५२	१८	लगा	लगाय
५३	२०	पर्व	पूर्व
५३	२१	ललते	लगते
५३	२४	सीम	सीम

पत्र नं०	पंक्ति नं०	अशुद्ध	शुद्ध
५४	२	मया	मयों
५४	३	दृपकर	ईंग्यकल
५४	१६	बडेदा	बडोदा
५५	८	अपन	अपन
,,	६	धम	धम
,,	८—११	धम	धर्म
,,	९	टीक	टिक
,,	१२	भाकराचार्य	भास्कराचार्य
,,	१४	का	को
,,	१८	अनाद	अनादि
५६	८	मूल्य	मुल्य
५६	८	डाक्ट	ड क्टर
५६	१६	जोधपर	जोधपुर
६२	१८	ब्राह्मणा	ब्राह्मणों
६४	१५	बाले	बोल
६६	१९	तार्थकरों	तीर्थकरो
६७	४	कहाँ	कहो
६७	५	का	को
६९	२४	अतनिष्ट	अ तनिष्ट
७४	१	पुत्रा	पुत्रों
७७	१८	लकडी	कडी २ कोंपलें
७९	२०	क	के
८०	२१	अध	अध
९०	१०	मसाधि	समाधि
९०	१७	सुग्र	सुर
९१	६	भागकरन	भगवान की पूजा
९२	१८	समझ का	समझका
९३	४	पखडी	पांखडी
९३	६	पिम्ब	बिम्ब
९३	७	धम	धम
९५	७	स	से
९८	१६	हर	हेर
	२२	राजाम	राजाओं

पत्र नं०	पंक्ति नं०	अशुद्ध	शुद्ध
९५	१	पमाग	प्रमाग
९६	१७	मुफ	मुफे
९८	२६	पमौटको	कर्नाटको
९९	६	नि दन	निवेदन
१०३	३	कृ	कुल
१०३	१६		हैं
१०४		इस	इस मे
,,	१७	माना	माना पिता
,,	,,	देनी	देते
,,	१३	होता है	इत्यादि देते हैं
,,	२४	चारित्र	चारित्र का कथन है उन
१०५	१	अनक	अनेक
१०६	५	स	म
११२	१	जम	जन्म
,,	१६	कथन	कथन,
,,	२०	अहिंक	अहिंसा
११६	४	हमारी	हमारे
११८	१०	पुरुषों	पुरुषों
११८	१५	पद्वा	पद्वी
११८	१६	क, का, दखो	के, को, देखो
१२२	७	नामिनाथ	नमिनाथ
१२२	२१	अहत	अर्हंत
१२९	४	मरमप	नरमव
१३२	१९	स्त्रियों	स्त्रियों
१३२	२१	आत्ता	आत्मा
१३२	२४	शरार	शरीर
१३१	१७	पवम	पवन
१३४	३	वि रीत	विपरीत
१३४	२८	करना	———
१३५	२२	हैं।	हो
१३६	६	हर गज	हरगिज
१३६	१३	मनासिव	मुनासिव
१३६	१७	दशोअप्यय	दशोअध्यय
,,	१८	दशोअय	दशोअ्य
,,	२८	पो०	पोमूद

विषय-सूची १

न० विषय अनुक्रमणिका — पत्र नम्बर

१ प्रार्थना — १—२

२ श्रीमान महा मान्य महोदय वाइसराय हिंद का पत्र — ३

३ " " — ४

४ " " " — ५

५ अखिल भारत वर्षीय दि० जैन महासभा का माननीय पत्र

६ जैन राज धर्म तथा उसकी प्राचीनता — ६

७ श्री ऋषभ निर्वाण ७६ अङ्क प्रमाण संयत मय शङ्काओं और उत्तर — ७—८

८ देव स्वरूप मय दर्शन स्तोत्र — ९—२५

९ ८४ अ भावना बोध — २६—३५

१० संसारी सुख दुख (मोहरस स्वरूप) — ३६—३०

११ पूजादि अधिकार व जैनियों की ८४ बातें — ३९—४१

१२ कुछ जैन जातियों का इतिहास — ४२—४३

१३ श्री गुरु का स्वरूप — ४४—४८

१४ जैन धर्म पर अजैन विद्वानों की सम्मतियां — ४९—५२

१५ जैन सिद्धांत — ५३—६४

१६ जैन धर्म पर अजैन विद्वानों की पुन सम्मतियां — ६४—६५

१७ धर्म स्वरूप — ६६—७५

१८ दीप मालिका (दिवाली) — ७६—७८

१९ धर्म परीक्षा — ७९—८०

२० व्रतों का स्वरूप — ८०

२१ चार आराधना (श्रीमान पन्नालाल, आध्यापक श्री संस्कृत पाठशाला कामा राज भरतपुर कृत) — ८१, ८२—८६

२२ राजा मधुको मुनि अवस्था अंत समय (श्री पद्मपुराण [जैन रामायण] से उधृत) — ८७—९०

नं०	विषय अनुक्रमणिका	पत्र नम्बर
२३	सप्त ऋषि उपदेश	९१—९५
२४	हमारी टीका	९५
२५	स्वाध्याय	९६—९७
२६	जिनवाणी रक्षा	९७—९९
२७	क्या जैनी तिगुरु है ?	९९—१००
२८	स्वाध्याय—धर्मोपदेश	१००—१०८
२९	संयम	१०८—१०९
३०	तप	१०९—१११
३१	दान	१११—११३
३२	स्त्री समाज से प्रार्थना	११४—११६
३३	स्त्रियों के महाव्रत	११६—११७
३४	स्त्री शिक्षा	११७—११८
३५	धर्म चरचाएं	११९—१३६
नोट—१	स्वाध्याय शंका	११९
२	जैन पंचों के गुण	
३	वात्सल्य अङ्ग	
४	सुधार शब्द	
५	निरोग रहने का उपाय	१२०
६	हर स्थान पर वाचनालय	
७	जैन धर्म से उपकार	
८	धर्म साधन व उपकार	
९	धर्म शास्त्र पुस्तकों का विनय	१२१
१०	वाद विवाद में गुण नहीं	
११	दिगम्बर संस्थाओं से निवेदन	
१२	छप ग्रन्थ पुस्तकों का विनय	
१३	तीर्थंकरोंके वर्ण और उनपर अजैनोंकी कहावत	१२२
१४	सांथिए का अर्थ	१२३
१५	"मिदि थी" का अर्थ	१२३—१२४
१६	विज्ञप्ति	१२५

नं०	विषय अनुक्रमणिका	पत्र संख्या
जोड़—१७	वैर से वैर की शांति नहीं	१२१—१२१
१८	षट्‌ चीजें का स्वरूप	१२६
१९	„ का फल	१२७
२०	जैन धर्म उन्नति के उपाय	१२७
२१	विचारने योग्य प्रश्न	१२७—१२८
२२	गृहस्थ के कर्तव्य	१२८—२९
२३	जैनियों के चिन्ह	१२९
२४	पढ़ने योग्य शास्त्र	„
२५	उद्देश	„
२५	"जिन" का अर्थ	„
२६	नीति वाक्य	„
२७	सम्यक्ती की पहिचान	„
२८	उपदेश	१३०—१३१
२९	जैन धर्म के सिद्धांत	१३१
३०	स्त्री शिक्षा पर मुनि श्री शांति सागर जी महाराज का उपदेश	१३२
३१	अरहन्त सिद्ध भगवान के मूलगुण	१३२—१३३
३२	दीर्घ चेतावनी	१३४
३३	हमारी भावना, आशीर्वाद	„
३४	मेरी भावना व निवेदन	१३४—३५
३५	आत्मा ज्ञान माला	१३५
३६	भाई से भाई की प्रीति	१३६
३७	अन्तिम भावना	„

मन को (ॐ) में स्थिर करो।

प्रार्थना ।

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धूत कलिलात्मने ।
सालोकाना त्रिलोकाना यद्विद्या दर्पणायते ॥ १ ॥

सिद्धं सपूर्णभ्य व्यार्थ सिद्धेः कारण मुत्तमं ।
प्रशस्त दर्शन ज्ञान चारित्र प्रति पादनं ॥ १ ॥
सुरेन्द्र मुकुटा श्लेष्टपाद पद्म सुकेसर ।
प्रणमामि महावीर लोक त्रितय मंगल ॥ २ ॥

त्रैलोक्य सकल त्रिकाल विषय सालोकमालोकित ;
साक्षाद्येन यथा स्वय करतले रेखात्रय साङ्गुलि ।
रागद्वेश भया मयान्तक जरा लोलत्व लोभादयो ,
नाल यत्पद लङ्घनाय स महादेवो मया वन्द्यते ॥ १ ॥

अर्थ—जिस प्रकार अगुलियों सहित हस्ततल की तीन रेखा स्पष्ट देखी जाती हैं , उसी प्रकार जिसने त्रिकाल गोचर अलोक सहित समस्त त्रिलोक को प्रत्यक्षतया स्वय देखा और राग, द्वेष, भय, रोग, मृत्यु जरा, लोलुपता लोभ आदिक जो १८ दोष हैं, वे जिनके पद को उल्लंघन करने को असमर्थ हैं, उस "महादेव" देवों का देव—अर्हंत वीतराग सर्वज्ञ जिनेन्द्र परमात्मा को" मैं वंदना (नमस्कार) करता हूं !

प्रिय बंधुवर्ग—प्रथम हम अपने इष्टदेव परमात्मा को अञ्जुली पर नमस्कार करते हैं जो हमारे परम मंगल के कर्ता हैं ।

द्वितीय—हम श्रीमान महामान्य सम्राट पंचम जार्ज (George V Emperor) को हार्दिक धन्यवाद देते हैं कि जिनके राज्य में स्वतन्त्रता पूर्वक धर्म साधन करते हैं

तृतीय—राजा महाराजाओं को जैसे जैपुर, जोधपुर, उदैपुर धौलपुर, ग्वालियर, अलवर, दतिया, पटयाला हैदराबाद दक्षन, टौंक कोटा, बूंदी, इन्दौर, अलीराजपुर, भावनगर, बरोदा बीकानेर बशाहर, बस्तर, भोर, बनगनापल्ले, भरतपुर, भोपाल, कोचीन, २ छोटा नागपुर स्टेट, चम्बा, कच्छ, केम्बे, कुर्ग देवास S Br, देवास, JBr दरभंगा, धार, गोंडाल, हिलटिपेरा ईडर, जावरा जम्बू, जैसलमेर, झींद, जंजीरा, झालरापाटन, खेतरी, कोल्हापुर काश्मीर, किशनगढ़, कूचबिहार, कपूरथला, खैरपुर, काठियावाड, मैसौर, १७ महल उड़ीसा, मनीपुर, मुरसान, नाभा, पन्ना, पालीताना, पुडूक्काटाई, राजगढ़, (व्यावरा), रीवां, रतलाम, राजपीपला, रामपुर सीकर, साहपुरा, सिरोही सरमूर, सैलाना, २३ शिमला पहाड़ी रियासतें, सावंतवाडी संडूर, ट्रावनकोर, टहरी, जो समस्त १०८ बड़े छोटे राज्य हैं अलावे इनके और बहुत से छोटे २ राज्य ठिकाने हैं उन सबको हम अन्त करण से धन्यवाद देते हैं । कि जिनके राज्य में न्याय पूर्वक धर्म साधन करते हैं हमारे ऐसे राजा महाराजाओं का शासन अटल रहे । प्रकट हो कि ऐसी प्रार्थना और भावना हम जैनी लोगों की है और जो धर्म हम लोग साधन करते हैं उसका छठा अंश सम्राट और राजाओ को पहुँचता है यह शास्त्र प्रमाण है ।

श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा के पहले अधिवेशन पर जो श्रीमान महोदय वाईसराय गवर्नर जनरल बहादुर को तार व लेग के समय जोपत्र सभाकी तरफसे भेजे गए उनके उत्तर हम यहां पाठकों के जानने के वास्ते प्रकाशित करते हैं ।

द्वारकापरशाद जैन
सभापति श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा साँभर लेक

Seal of the Private Secretary's Office

Viceregal Lodge,
DELHI
7th November 1917

Dear Sir,

I am desired to thank you for your loyal message of the 4th november 1917

Yours Faithfully,
(Sd.) B. L GAULD.
Asst Private Secretary to the Viceroy

To
THE PRESIDENT
Digamber Jain Religion Progressive Association, SAMBHAR

(हिन्दी अनुवाद)

प्राइवेट सेक्रेटरी के दफ्तर की मुहर

वाईसरेगल लोज
देहली ।
७ नम्बर सन् १९१७

प्रिय सज्जन !

मैं आपके राजभक्त तार तारीख ४ नोम्बर १९१७ के लिए धन्यवाद देता हू ।

आपका फर्मांबरदार
(sd) बी एल, गाल्ड ।
असिस्टन्ट प्राइवेट सेक्रेटरी
'वाइसराय के'

बनाम, दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा साँभर ।

JOINT WAR COMMITTEE

Of the order of S John's and the Red Cross

SOCIETY

Seal of The st John Ambulance Association	"OUR DAY" (12th December 1917)	MARK OF RED CROSS

PRESIDENT

His Excelley The Viceroy & Governor General of India

Chairman of the General Committee

His Excellency the Commander—In—Chief

President of the Executive Committee,

Her Excellency the Lady Chelmsford, C I

Assistant Secretary Captain L C Stevens R F A

SIMLA TEL No 263

Hon Treasurer W J Lister Alliance Bank of Simla

Honorary Secretary E J Buck Office of OUR DAY" North Bank Simla & Viceroy's Camp Delhi (During Cold Weather)

Dear Sir,

877 December29th 1917

I am desired to thank you very much for your Letter of December 12th 1917 Her Excellency Lady Chelmsford is much grieved that your district has bee visited by plague & hopes for a Speedy return of healthy Conditions among You and at the same time desires me, to express to you, her Sincere thanks to the DIGAMBER JAINS for their useful and generous Subscriptions,

I am, Yours truly
(Sd) I C Stevens Captain
Assistant Secretary

To the President Digamber Jain Religion Progressive Association Po Sambhar lake Rajputana,

हिन्दी अनुवाद ।

सट जो स और सेंड्रजोस सोसाइटी को ओर्ड बार कमेटी ।

"हमारा दिन १२ दिसम्बर सन् १९१७"

सभापति—श्रीमान महोदय वाइसराय और गवरनर जनरलहिंद, चेअरमेन जनरल कमेटी—श्रीमान महोदय कमा डर—इन—चीफ, सभापति ऐक्जेक्यूटिव कमेटी—श्रीमती महोदया लेडी चेमसफोर्ड सी० आ ई०

असिस्टेंट सेक्रटरी—केपटिन एल सी स्टेमिस आर एफ ए. शिमला टेलीफोन नम्बर २६३

आनररी ट्रेजरर-डबल्यू—जे—लिटस्टर अलाइन्स बैंक शिमला

आनरेरी सेक्रटरी—ई जे एक। दफतर "हमारे दिनका" नोर्थ एक शिमला और वाइसराय केम्प देहली (सर्दऋतु में)

८७७ दिसम्बर २८। १९१७

प्रिय सज्जन

मैं आपको, आपके पत्र ता० १२ दिसम्बर १९१७ के लिये बहुत धन्यवाद देता हूं, श्रीमती लेडी चमसफोर्ड को बहुत रंज हुआ कि तुम्हारे जिले में प्लेग फैल गई और उम्मेद करती हैं कि यह कष्ट जल्द निवारण हो, और साथ ही "दिगम्बर जैनिय" को उनके मुफीद और फय्याजी चन्दे के बारे में हार्दिक धन्यवाद देती हैं।

आपका दियानतदार
(SD) एल सी स्टेमि स केपटिन

असिस्टेंट सक्रेटरी

बनाम सभापति श्रीदिगम्बर जैन धर्म प्रभावनी सभा—सांभरलेक

॥ वंदे वीरम ॥

दिशतु मेऽभिमतानि सरस्वती

अयि माननीया, सुहृदः द्वारिकाप्रसादजी जैन हाथरस सभापति जैन सभा साम्भरलेक (राजपूताना) अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन-महासभाया, पत्र विंशतितमे महोत्सवे श्रीवीर सम्वत २४४७ चैत्रमासस्य द्वितीय सप्ताहे कानपुर (यू० पी०) नगरे सम्भृताया प्रथम जैन साहित्य प्रदर्शिन्यां यच्छ्रीमद्भिः परोपकारपरायणैः धर्म बुद्धया अनेक प्रकाराणि पुस्तका दीनि समाचार पत्राणि च वितरणाय द्रव्याणि प्रेषितानि, तत्कृते सबहुमान, पुरस्सरमेतत्सम्मान पत्र पत्र भवतां श्रीमता सेवाया समर्प्यते ! कृतेनानेन साहाय्येन सुचिर कृतज्ञता—पाशवद्धाः स्मः ।

हस्ताक्षराणि—

(SD) Champat Rai Jain (SD) दुर्गाप्रसाद

लखनऊ महोत्सवस्य सभापतेः प्रदर्शिन्याः सभापतेः

(SD) रामसरूप (SD) कन्हैयालाल

स्वागत समित्याः सभापतेः प्रदर्शिन्याः मन्त्रिणः

ता० ५—२—१९२२

जैनराजधर्म तथा उसकी प्राचीनता।

जैन धर्मसे क्षत्रिय राजाओं का कितना अधिक सम्बन्ध है यह मैं संक्षेप से प्रगट करता हूं।

जैन धर्म के प्रवर्तक २४ तीर्थंकर १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रति नारायण और ९ बलदेव ये त्रेशठि शलाका अर्थात पदवी धारक महान पुरुष प्रत्येक कल्पकाल में होते हैं और ये सब नियमसे वीर क्षत्रिय राजवंश के सर्वोच्च कुल में ही जन्म लेते हैं।

यों तो जैन धर्म को चारों वर्ण से लेकर तिर्यंच तक स्वशक्ति अनुसार धारण कर सकते हैं, किंतु जैन धर्म ने विशेषता क्षत्रिय वर्ण को ही दी है, क्योंकि" "जो कर्म शूरा सो धर्म शूरा,, अर्थात् जिसमें कर्म करने की शक्ति है वही कर्म काट सकता है। और यह गुण क्षत्रियों में प्रधानता से होता है, इसी से जैन शास्त्रोंमें यत्र तत्र वीर क्षत्रियों के ही गुणों का कथन बाहुल्यता से भरा हुआ है, जैन पुराणों को यदि वीर क्षत्रियों का इतिहास कहा जावे तो कोई अयुक्ति नहीं होगी।

भगवान ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर इक्ष्वाकुवंशी ने नाभिराजा माता मरुदेवी के यहां स्थान अयोध्यपुरी में जन्म लिया था इन भगवान को कोई २ ऋषभ अवतार भी कहते हैं, कोई २ बाबा आदम भी कहते हैं इन्हों ने ही प्रथम कर्मभूमि सृष्टि की रचना की है, भगवान ऋषभदेव ने तीनों वर्ण के कर्म बतलाते हुए क्षत्रियों के असि (शस्त्र) कर्म को पहिले स्थान दिया है, शस्त्र कला का प्रचार सब से पहिले जैनियों के घर से हुआ है। जैन शब्द मे ही वीरत्व भाव भरा हुआ है। जैन धर्म को शक्तिधारी आत्मा ही भले प्रकार से धारण कर सकता है।

जैन इतिहास से प्रगट है कि आजतक २४५२ वर्ष पूर्व २४ वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी जिनका धर्म चक्र अभी तक चल रहा है विहार जिले के कुंडलपुर नगर के नाथवंशी राजा सिद्धार्थ के पुत्र थे, राजा सिद्धार्थ का विवाह सिंधु देश के महाराजा चेटक की बड़ी पुत्री त्रिशला देवी (प्रियकारिणी) से हुआ था, (जिन से महावीर स्वामी का जन्म हुआ ।)

रानी त्रिशला देवी की बहिन चेलना मगध देश की राजगृही नगरी के राजा श्रेणिक (जिनका नाम भारतीय इतिहास में बिम्बसार लिखा है) को व्याही गई थी उसी समय में कलिंग देश के यादववंशी राजा जितशत्रु थे जिनको राजा सिद्धार्थ की बहिन यानी महावीर स्वामी की बुआ व्याही गई थी । इस तरह से उस उस समय भारतवर्ष के बड़े बड़े क्षत्रिय राजा महाराजा एक न एक सम्बन्ध से जैन राजकुलों में थे। राजा चन्द्रगुप्त जैनी मौर्यवंशी क्षत्रिय था यह क्षत्रिय उपकारिणी महासभा ने माना है। जैन मित्र ता० ९—१—१८ में राजस्थान के प्रसिद्ध राज्य कुलों में जैन धर्म" नामक लेख में मेवाड़ राज्य उदयपुर, मारवाड़ राज्य जोधपुर और जैसलमेर राज में जैन धर्म की मान्यता के ऐतिहासिक प्रमाण प्रगट किये हैं। जैन धर्म, राजाओं का ही, धर्म है इन्होंने इस प्रगट किया है यह समय का परिवर्तन है कि आजकल जैन धर्म के धारी कम दृष्टिगत होते हैं ऋषभदेव भगवान का सम्वत ८६ यह प्रमाण है जिससे जैन धर्म यानी जिन या जैन नाम भगवान ईश्वर के धर्म की प्राचीनता प्रगट होती है हम अपने पाठकों के लाभार्थ मय प्रश्न और उत्तर के यहां प्रकाशित करते हैं (कुछ [illegible] दि० जैन अङ्क ७ वर्ष १२ पत्र १७ व १८ वैसाख वीर [illegible] २४४ महासभादि के कोटा के अधिवेशन प्रस्ताव सातवें पर [illegible]मथान)

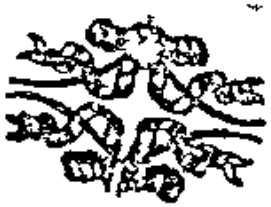

ॐ

श्री वीर नि० २४५२

श्री ऋषभ निर्वाण संवत् पर शंकाएं और उनका उत्तर।

(ले० श्रीमान् प० बिहारीलाल जैन, सी० टी०)
(बुलन्दशहरी अमरोहा)

(दि० जैन ... वर्ष १० वां ज्येष्ठ वीर २४५३ पत्र १८)

विदित हो कि यह लेख गत मास जनवरी के "जैन प्रचारक" में तथा गत १० जनवरी के "जैन प्रदीप" में और गत मार्च मास के "दिगम्बर जैन" में प्रकाशित हुआ था जिसे पढ़कर बहुत से इतिहास प्रेमी हमारे भाइयों ने अपना हार्दिक हर्ष प्रकट किया और तीन चार महाशयों ने इस सम्वत् के विषय में कुछ शंकायें भी की हैं जिससे ज्ञात होता है कि इस लेख को बहुत से भाइयों ने ध्यान पूर्वक बड़ी रुचि से पढ़ा है और अपनी अपनी योग्य सम्मति देकर इस उदाहरण मेरे उत्साह को बढ़ाया है और मुझे आभारी बनाया है, जिसका धन्यवाद देने के लिए मेरे पास यथोचित शब्द नहीं हैं।

जिन भाइयों ने कुछ शंकाएं प्रकट की हैं उनका सारांश निम्नलिखित दो भागों में विभक्त हो सकता है —

(१) इतने बड़े ७० अङ्क के महान सम्वत् को किस प्रकार पढ़ा जावे जब कि इकाई दहाई आदि दश शङ्क तक कुल १९ ही अङ्क प्रमाण नियत है?

(२) किस जैन ग्रंथ के आधार पर और किस प्रकार यह संवत् निकाला गया है?

उपरोक्त शंकाओं में से पहली शंका प्रकट करते हुए

हमारे कुछ आर्य समाजी भ्राताओं में तथा कई अन्य अंग्रे
विद्वानों ने तो अपने पूर्ण गणितज्ञ होने का यहां तक परिचय दिया
है कि दश शंख से आगे गिनती का होना ही असम्भव बतला
दिया है ॥

इस लिए पूर्ण विद्वान सर्व विद्यानिधान सर्वज्ञ तुल्य महाशयों से
नम्रता पूर्वक निवेदन है कि वे गम्भीर दृष्टि से अपने हृदय में विचारें
कि क्या गणना की भी कोई हद हो सकती है? इस प्रकार विचार
दृष्टि से काम लें, पर भले प्रकार ज्ञान होगा कि गणना की कोई
हद या सीमा नहीं होसकती तो भी हम संसारी मनुष्यों को अपनी २
आवश्यकतानुकूल कुछ अंकों तक गणना नियत कर लेनी पड़ती है।
अपनी २ आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर देशदेश के विद्वानों
ने अपनी अपनी बुद्धि वा विचारानुसार अनेक प्रकार से गणना
कुछ न कुछ स्थानादि मानकर उनकी कल्पित संज्ञा नियत करली
है और अपने २ आवश्यकीय सर्व कार्य उसी से निकाल लेते
हैं, उदाहरण के लिए कुछ विद्वानों की कल्पित इकाई दहाई आदि
नीचे लिखी जाती हैं:—

(१) अर्बी फ़ारसी की इकाई दहाई—इकाई, दहाई,
सैकड़ा हज़ार, दशहज़ार, सौहज़ार। केवल ६ अंक प्रमाण।

(२) लीलावती की इकाई दहाई—एक, दश, शत, सहस्र,
अयुत लक्ष प्रयुत, कोटि, अर्बुद, अब्ज खर्व, निखर्व महापद्म,
शंकु, जलधि अन्त्य, मध्य, परार्ध। १८ अंक प्रमाण।

(३) उर्दू हिन्दी भाषा की इकाई दहाई—इकाई, दहाई,
सैकड़ा, सहस्र दश सहस्र, लक्ष, दश लक्ष, कोटि, दश कोटि, अर्ब,
दश अर्ब, खर्व, दश खर्व, नील, दश नील, पद्म, दश पद्म, संख,
दश संख। १९ अंक प्रमाण।

(४) श्री महावीराचार्य कृत गणित-सार संग्रह* की इकाई दहाई—एक, दश, शत, सहस्र, दश सहस्र, लक्ष, दश लक्ष, कोटि, दश कोटि, शत कोटि, अर्बुद, न्यर्बुद, खर्व, महा खर्व, पद्म, महा पद्म, क्षोणी, महा क्षोणी, शंख, महा शंख, क्षिति, महा क्षिति, क्षोभ, महा क्षोभ। २४ अङ्क प्रमाण।

(५) अंग्रेजी भाषा की इकाई दहाई—इकाई, दहाई, सैकड़ा, हजार, दश हजार, सौ हजार, मिलियन, दश मिलियन, सौ मिलियन, हजार मिलियन, दश हजार मिलियन, सौ हजार मिलियन, बिलियन, दश बिलियन, सौ बिलियन, हजार बिलियन, दश हजार बिलियन, सौ हजार बिलियन, ट्रिलियन, दश ट्रिलियन, सौ ट्रिलियन, हजार ट्रिलियन, दश हजार ट्रिलियन, सौ हजार ट्रिलियन। २४ अङ्क प्रमाण। यह इकाई दहाई ऐसे ढंग से नियत की गई है कि क्वाड्रिलियन आदि शब्दों द्वारा छह छह अंक उपरोक्त रीति से बढ़ा कर २४ अंक प्रमाण से आगे भी अधिक अंक प्रमाण बड़ी सुगमता से की जा सकती है।

उपरोक्त उदाहरणों के अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार की इकाई दहाई हैं जो अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार से कल्पना की हैं, और जो मानव प्राणी जन समूह की नित्य प्रति के सब व्यवहारिक कार्यों में पड़ने वाली आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए केवल पर्याप्त (उपयुक्त) ही नहीं किंतु पर्याप्त से भी अधिक है।

---

* यह जैन आचार्य कृत गणित-ग्रंथ भास्कराचार्य कृत "लीलावती" से २०० वर्ष पूर्व का है जो अंग्रेजी अनुवाद सहित "मदरास प्रांत" सरकार की आज्ञानुसार वहां के गवर्नमेंट (सरकारी) प्रेस में प्रकाशित हो चुका है। "लीलावती" में संभवतः अधिकतर इसी का अनुकरण है। आज कल की हिंदी उर्दू में प्रचलित इकाई— और किसी से न मिलकर अधिकांश, न इसी की इकाई — से मिलती जुलती है।

जैनसिद्धान्त में चूंकि तीनलोक का स्वरूप तथा उस में रहने वाले षट्द्रव्य का वर्णन इतना अधिक विस्तार पूर्वक है कि जिसका शतांश भी इस पृथ्वी तलपर अन्यत्र कहीं नहीं पाया जाता इसी लिए इसी सिद्धांत का गणित भाग भी और भागों की समान बहुत ही उच्च कोटिका है।

गणित विद्या के जो अंक गणित, बीज गणित, रेखा गणित आदि अनेक भेद हैं उन में से एक अंकगणित के जैन ग्रन्थों में दो मुख्य विभाग हैं पहला लौकिक और दूसरा अलौकिक या लोकोत्तर। इन दो में से पहले के मान, उन्मान, अवमान, गणितमान, प्रतिमान, तत्प्रतिमानादि भेद हैं और दूसरे लोकोत्तर के द्रव्यमान, क्षेत्रमान, कालमान, और भावमान इस प्रकार ४ भेद हैं। इन चारों भेदों में से पहिले द्रव्य लोकोत्तरमान के अन्तर्गत संख्या लोकोत्तरमान और उपमालोकोत्तरमान यह दो उपभेद हैं।

इन दोनों में से संख्या लोकोत्तरमान के मूल तीन स्थान अर्थात संख्यात, असंख्यात, और अनन्त हैं और विशेष २१ स्थान हैं। तथा इसी संख्या लोकोत्तरमान को, सर्वधारा, समधारा विषमधारा, कृतिधारा, अकृतिधारा, घनधारा, अघनधारा, कृति मात्रिक धारा, अकृति मात्रिक धारा, घन मात्रिक धारा, अघन मात्रिक धारा, द्विरूप वर्गधारा द्विरूप घन धारा और द्विरूप घनाघन धारा यह १४ धारा हैं। दूसरे उपमा लोकोत्तर मान के पल्य, सागर सूच्यंगुल आदि ८ स्थान हैं। इसी प्रकार क्षेत्र काल और भाव लोकोत्तर मान के अनेक भेद–प्रभेदादि हैं।

इन सबको सविस्तार वर्णन उदाहरण आदि सहित जानना हो तो "बृहत धारा परिक्रम" और "महावीर गणित सार संग्रह" आदि जैन गणित ग्रन्थों में तथा श्री त्रिलोकसार और श्री गोमट्टसारादि जैन ग्रन्थों के गणित भाग में देखें। यहां केवल इतना बताना ही अभीष्ट है कि इतना बड़ा ७६ अङ्क प्रमाण संख्या वाला सम्बन किस प्रकार पढ़ा जा सकता है ? इस के पढ़ने के लिए कौन सी इकाई दहाई है ?

ऊपर बताया जा चुका है कि "लौकिक गणित भाग" के ६ भेदों में एक चौथा भेद "गणित-मान" है। इसके अन्तर्गत जो इकाई दहाई है वह उपरोक्त प्रकार २४ अंक प्रमाण है।

लौकिक कार्यों में इस से अधिक तो क्या इतने अङ्कों तक की भी आवश्यकता किसी को नहीं पड़ती। परन्तु "लोकोत्तर गणित भाग" में अवश्य अधिक की आवश्यकता पड़ती है। जिस के लिए जैनाचार्यों ने उपरोक्त प्रकार "संख्या लोकोत्तर मान" में जघन्य संख्यात आदि उत्कृष्ट अनन्तानन्त पर्यन्त २१ भेदों और लक्षण आदि १४ धाराओं में तथा उपमा लोकोत्तरमान में पल्य सागरादि द्वारा बड़े विस्तार के साथ आवश्यकतानुसार सब ही कुछ समझा दिया है। इनमें से "संख्या लोकोत्तरमान" के अन्तर्गत निम्न लिखित इकाई दहाई है जिसकी सहायता से यदि आवश्यकता पड़े तो हम ७६ अङ्क तो क्या सैकड़ों सहस्रों अङ्क तक की संख्या को बड़ी सुगमता से पढ़ सकते हैं। वह यह है—

एक दश शत, सहस्र दश सहस्र, लाख, दश लक्ष, कोटि, दश कोटि, अर्बुद, दश अर्बुद, खर्व दश खर्व, नील, दश नील, पद्म, दश पद्म शंख, दश शंख, महाशंख यहां २० अंक प्रमाण गिनती है। इस से आगे * एकट्ठी, दश एकट्ठी, शत एकट्ठी, सहस्र एकट्ठी, दश सहस्र एकट्ठी, आदि महा शंख एकट्ठी तक २० अंक प्रमाण ४० अंक तक एकट्ठी के स्थान हैं। इसी प्रकार एकट्ठी के स्थानों की तरह पल्य, सागर और कल्प के बीस बीस स्थान हैं जिस से महाशंख कल्प तक एक एक अंक अनुक्रम से बढ़कर १०० अंक प्रमाण संख्या हो जाती है। कल्प से आगे दुकट्ठी, त्रिकट्ठी, चकट्ठी, पंकट्ठी, छकट्ठी, सकट्ठी, अकट्ठी, नकट्ठी और दकट्ठी में से प्रत्येक के सौ २ स्थान इस प्रकार है कि प्रथम के १०० स्थान वाचक शब्दों के आगे एकट्ठी आदि के सदृश दुकट्ठी आदि शब्द लगा दिए जाते हैं। इस प्रकार एक २ स्थान बढ़ती हुई संख्या हजार (१०००) स्थान तक पहुंच जाती है।

नोट—यहां इतना ध्यान में रखना आवश्यक है कि संख्या लोकोत्तरमान के जो उपरोक्त मूल तीन और विशेष २१ भेद हैं,

---

* २ को ६४ जगह रखकर परस्पर गुणा करने से जो १८४४६७४४०७३७०९५५१६१६ संख्या २० अंक प्रमाण आती है उस को एकट्ठी कहते हैं। यह संख्या २० अंक प्रमाण संख्या से जघन्य भेद से अधिक है इसी लिए इकाई दहाई के हिसाब से २१ अंक प्रमाण संख्या का नाम भी "एकट्ठी" माना गया है।

उन में संख्यात की गणना १५० अंक ※ प्रमाण संख्या तक है इस से आगे असंख्यात की गिनती है।

इस लिए १५० अंक अर्थात् इकाई दहाई के १५० स्थान से आगे इकाई दहाई से गणना करने की कुछ आवश्यकता ही नहीं पड़ती और जो कुछ पड़ती है वह, असंख्यात आदि के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट आदि भेद २८ भेदों से पूरी कर ली जाती है। और यदि किसी को विशेष जानकारी के लिए अनावश्यक होने पर भी आवश्यकता जान पड़े तो उपरोक्त सहस्र (१०००) अंक तक इकाई दहाई के स्थान गिन दिए गए हैं।

इस में आगे भी उपल्योपम, दुपल्योपम, त्रिपल्योपम आदि अनेक स्थान इकाई दहाई के हैं जो कि व्यर्थ लेख बढ़ जाने के भय से अनावश्यक समझ कर नहीं लिखे गए हैं।

※ पण्डित धानतरायजी कृत चर्चा शतक का पद्य नम्बर ९२ और उसकी व्याख्या देखो। इस विषय में मुझे स्वयं बड़ा संशय है, अर्थात् मेरी निज सम्मति में केवल १५० अंक प्रमाण तक ही संख्यात की गिनती नहीं है क्योंकि **जघन्य परीता संख्यात** तो एक कम उत्कृष्ट संख्यात की गणना है और जघन्य परीत संख्यात बहुत ही बड़ी गणना का नाम है। इस लिए विद्वान् महाशय पण्डित धानतराय जी के अभिप्राय के इस भाग का यथार्थ अर्थ शास्त्र प्रमाण से स्पष्ट प्रकट करने की कृपा करें।

(लेखक)

उपरोक्त इकाई दहाई से ७६ अंक प्रमाण और श्री ऋषभ निर्वाण सम्वत् ४१३४५२६३०३०८२०३१, ७७७४९५१७ ९९९९९, ९९, ९९, ९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९, ९९९९९९९९९ ९९९९९९९९९६०४५२ है, यह इस प्रकार पढ़ा जा सकता है —

४ पद्म, १३ नील ४५ खरब, २८ अरब, ३० कोटि, ३० लाख, ८२ हजार और ०३१ सागर, ७७७ शङ्ख, ४८ पद्म, ५१ नील, २१ खर्ब ९९ अरब, ९९ कोटि, ९९ लाख, ९९ हजार, ९९९ पल्य, ९९९ शङ्ख, ९९ पद्म, ९९ नील, ९९ खर्ब, ९९ अर्ब, ९९ क्रोड, ९९ लाख, ९९ हजार, और ९९९ पकट्टी, ९९९ शङ्ख, ९९ पद्म, ९९ नील, ९९ खर्ब, ९९ अर्ब, ९९ क्रोड़, ९९ लाख, ६० हजार ४५२

अब रही दूसरी शंका कि किस जैन ग्रन्थ के आधार पर और किस प्रकार यह सम्वत् निकाला गया है। इस शंका के विषय में हमारे किसी २ जैन भ्राता ने बड़े आश्चर्यजनक शब्दों मे लिखा है कि क्या सागरों के भी वर्ष हो सकते हैं? जैसे सागर के जल की थाह नहीं ऐसे ही सागर के वर्षों की गिनती नहीं। सागर के वर्षों की गिनती करना मानो समुद्र को कूजे में भरना और अज्ञानों को भ्रम में डाल देना है। यदि सागर के वर्षों की गिनती हो सकती तो बड़े २ जैनाचार्यों ने क्यों शास्त्रों मे नहीं लिखा तथा एक योजन (दो सहस्र कोश) व्यास का और एक योजन ही गहरा गढ़ा भोगभूमि के सात दिन तक के मेढ़े के बालाग्रों से पूर भरकर और सौ सौ वर्ष के अन्तर से एक २ टुकड़ा निकालना बताकर जो एक पल्य के वर्षों की गणना आचार्यों ने बताई है वह इतने चक्कर में डालकर किस लिए कथन को इतना बढ़ाया और अपने समयादि को खोया? बस अंकों में पल्य के वर्षों की गिनती लिख देते इत्यादि। इसके उत्तर में शास्त्र प्रमाण द्वारा शंका दूर करने से पहिले यह निवेदन

कि अवलोकन वालों की दृष्टि गोचर करते हुए हमारे आगमग्रं[illegible] ग्रंथों [illegible] बहुत से [illegible] इस प्रकार के बहुत बड़े आगारों "सागर" का नाम इसी लिए दिया गया है कि यह सागर अर्थात् समुद्र के समान महान् हैं। सागर के प्रमाण [illegible] लिए सागर (समुद्र) की उपमा [illegible] में दी गई है वह सागर (समुद्र) [illegible] सागर हिंद महासागर या पासिफिक महासागर [illegible] छोटा सा नहीं किंतु उसकी उपमा [illegible] लवण समुद्र [illegible] वाले जम्बूद्वीप के [illegible] दो लाख महायोजन चौड़ा [illegible] महायोजन [illegible] वलयाकार है, या इसके [illegible] प्रकार समझने के लिए यों देख लीजिए कि आधुनिक [illegible] आज कल जो मानी हुई सारी पृथ्वी जिस में [illegible] यूरप, अफ्रीका, अमेरिका आदि सर्व देश हैं और हिंद महासागर, पासिफिक महासागर, अटलांटिक महासागर [illegible] लवण समुद्र [illegible] है [illegible] सागर (समुद्र) [illegible] सागर [illegible] की उपमा दी गई है [illegible] सागर की [illegible] सागर को [illegible] किंतु [illegible] सागर [illegible] [illegible] यह [illegible] लवण समुद्र के संपूर्ण [illegible] सागर के [illegible]

[illegible] महासागर [illegible] [illegible] [illegible]

बराबर क्र लिए जावें तो उन संख्याओं को मात्रा अङ्क यह तो दूर रहे ९७ अङ्क से भी अधिक न रहेंगी, तब तो उनकी ऊँचा आदि की बाहर निकल कर न जाने कहाँ से कहाँ तक पहुँच जायगी। और फिर जिस समय हमें यह ज्ञान होगा कि गणितज्ञ वे निष्णात गणितज्ञ भी कोई पूरा गणितज्ञ नहीं किंतु सामान्य ही के लिए लवण समुद्र जो कि, उस स लाखों करोड़ों गुणे बड़े महासमुद्र के मार्गों में आ रहा है आदि छोटे छोटे बिन्दुओं की गिनती बता देना एक उसी ही साधारण सी बात है जैसे कि किसी दीवार की ईंटों की गिनती बता देना हैं, तब तो नहीं कहा जा सकता कि उनके चित्त की उड़ानें अनेक विचारों की दौड़ को कहाँ से कहाँ पहुँचा दें।

अब यहाँ यह जान कि यदि सागर के काल की गिनती वर्षों में निकालनी सम्भव होती तो क्या हमारे आचार्य भी निकाल कर शास्त्रों में क्यों न बता देते अथवा पल्य की संख्या को बताने के लिए महान गड्ढा खोदने और बालाग्र भरने आदि का आडम्बर क्यों रचा? इसके उत्तर में निम्न लिखित निवेदन है —

(१) आचार्यों ने तो सब कुछ निकाल कर शास्त्रों में रख दिया (जैसा कि आगे चलकर इसी लेख से आपको ज्ञात होगा) पर जब हम उन ग्रन्थों को देखें पढ़ें और ध्यान पूर्वक समझने का प्रयत्न करें तब ही तो जानें। हमारे पवित्र और सम्पूर्ण विद्याओं के भंडार स्वरूप जैन ग्रन्थों में कोई बात कल्पित व मन गढ़न्त नहीं किंतु जो कुछ है वह सब वास्तविक और यथार्थ है और हर विषय को ऐसी उत्तम रीति से समझा दिया गया है कि सरल रीति से आप समझ सकते हैं जो कुछ भी कठिनाई नहीं होती। पल्य और सागरादि का हिसाब लगा देना तो एक बहुत ही साधारण और छोटी सी बात है पर जैन ग्रन्थों में तो गणित विषय के (चन्द्र विज्ञान या विषयों के समान) बड़े ही

उत्तम, ऐरावतादि वर्णकर [illegible] [illegible] और कठिन से कठिन प्रश्नों और सूक्ष्म से सूक्ष्म बातों को इसी उपाय और गुणों [illegible] सहज कर सिद्ध कर दिखाया है कि [illegible] आज कल के स्कूलों के [illegible] विद्यार्थी [illegible] सहज होने [illegible] उनको [illegible] अक्रममें समझ में आ जाते हैं।

(२) एक [illegible] अर्थात् दो करोड़ कोस या [illegible] [illegible] [illegible] इतना ही [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पर [illegible] तो यह है कि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] को [illegible] संख्या को केवल [illegible] में [illegible] लिखा जाय [illegible] [illegible] हो है)। सो उसका भी [illegible] संख्या पूर्ण और वास्तविक सहर्ष कदापि विस्तार [illegible] [illegible] होता [illegible] कि भी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करनेवालों के [illegible] [illegible] [illegible] जो [illegible] की संख्या से [illegible] [illegible] नहीं किन्तु उससे [illegible] भी करोड़ गुणा [illegible] ७६ अंकों में है।

उदाहरण के लिये श्री [illegible] के [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] अर्थात् ४२६३ [illegible] [illegible] [illegible] अङ्कों [illegible] हैं। इन [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नहीं होता। परन्तु इन [illegible] [illegible] [illegible] यदि इस प्रकार [illegible] जावे कि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] को कागज पर लिखा जावे तो उनके लिखने में करोड़ों हाथियों को तौलके [illegible] स्याही खर्च हो जायगी और [illegible] [illegible] हाथियों के बराबर कागज खर्च होगा और उसको केवल एक [illegible] लिखने [illegible] [illegible] लिखनेवाले [illegible] मनुष्यों

को भी करोडों वर्ष लगेंगे। (यह भी ध्यान रहे कि अन्तर भी कोई विचित्र प्रकारसे या अनोखे नहीं किन्तु जैन ही क्रम एक श्लोक को गिनाम ३२ मानकर हमारे सुप्रसिद्ध ग्रन्थ पद्मपुराणमें साढे छह लाख (६५००००) के करीब हैं।) जैन तो श्री जिनवाणी के अक्षरों का सख्या कितने बड़े आश्चर्यजनक रूपका धारण करके हमारी आखों के सामने आ उपस्थित होती है। यहांतक कि हमारे बहुतसे भाईगण कहते हैं कि श्री जिनवाणीके अक्षर संख्या से रहित हैं। उनका गिनकर बतलाना मनुष्यों की शक्तिसे बाहर है। इस उदाहरणसे इस लेखके पाठक महोदय भले प्रकार समझ गये होंगे कि किसी वस्तुकी महान गणनाओंका अंकों द्वारा बतानेसे उसका पूरा अनन्त महत्व चित्तपर अंकित नहीं होता। इसी लिये सवंत् के वर्षों की महान संख्याको इस रूपमें तुम्हारी दृष्टिके सामने रक्खा गया है।

इस प्रकार उपर्युक्त शकाओं का थोडासा उत्तर दे चुकने पर अब मूल प्रश्नोंका उत्तर नीचे लिखा जाता है जिससे ज्ञात होगा कि **श्री ऋषभ निर्वाण संवत्** किस जैन ग्रंथके आधार, और किस प्रकार निकाला गया है, और कैसे यह पूर्णतया **शुद्ध और ठीक है—**

(१) वृहत् व्यवहार प०४६ रोमों की संख्या ८४४४५३०८३४८५३४१७१८१६१९ १३९३७५००००००००००००००००००० अर्थात् ७७ अंक और १४० शून्य कुल २१७ अंक प्रमाण है।

प्रमाणके प्रमाण—१ श्री गोम्मटसार जीवकाण्ड भाषा पं० टोडरमलजी कृत टीका पर्याप्ति अधिकार ३ के प्रारंभमें अलौकिक गणित।

(२) श्री गोम्मटसार, कर्मकाण्ड भाषा पं० मनोहरलालजी कृत छोटी टीकाकी भूमिका।

(३) श्री तत्त्वार्थ सूत्रजीकी अर्थ प्रकाशिका टीका अध्याय ३ सूत्र ३८ की व्याख्या।

(४) श्री तत्त्वार्थ सूत्रजीकी सर्वार्थसिद्धि भाषा टीका, अध्याय ३; सूत्र ३८ की व्याख्या।

(५) श्रीमान् प० द्यानतरायजीकृत चर्चाशतकका पद्य १३१ और उसकी व्याख्या।

(६) श्री हरिवंश पुराण भाषा टीका का सर्ग ७।

(७) श्री त्रिलोकसारजीकी भाषा टीका श्रीमान् प० टोडरमल जी कृत का गणित भाग इत्यादि देखें।

(२) व्यवहार पल्य के रोमों की संख्या को १०० से गुणा करने से जो संख्या प्राप्त होगी वह एक पल्योपम काल के समयों की संख्या है जिस में उपरोक्त २७ अङ्क और २० शून्य सब ४७ अङ्क हैं।

शास्त्र प्रमाण—उपरोक्त ग्रन्थ।

नोट—जिस पल्य अर्थात् खत्ती या गढ़े से उपमा दी जाय उसे पल्योपम कहते हैं। इस लिये जिसे हिंदी भाषा ग्रन्थों में बहुधा पल्यकाल बोला जाता है वह वास्तव में पल्योपम काल है। पल्य तो केवल गढ़े या खत्ती का नाम है जिससे कालादि की गणना करने के लिये तीन भेदों अर्थात् व्यवहार पल्य, उद्धार पल्य और अद्धा पल्य में विभाजित किया गया है और जिन से यथा योग्य द्वीपसमुद्र कालादि की बड़ी गणनाओं में काम लिया जाता है।

(३) दश क्रोड़ा क्रोड़ी (१० करोड़ का करोड़ गुणा अर्थात् एक पद्म) पल्योपम का एक सागरोपम जिसे संक्षेप में सागर

से उपमा दी गई है) होता है। पल्योपम के उपरोक्त वर्षों की संख्या को दश कोड़ाकोड़ी से गुणा करने से उपरोक्त २७ अङ्क और ३४ शून्य सब ६२ अंक हो जाते हैं जो एक सागरोपम-काल के वर्षों की संख्या है।

शास्त्र प्रमाण—उपरोक्त सूत्र १५

नोट—जहाँ जहाँ कहीं नहीं आयु वाले मनुष्य या देव देवी आदि की केवल एक जन्म सम्बन्धी आयु की स्थिति बताई गई है वह सब इसी **पल्योपम** और **सागरोपम** में है न कि किसी प्रकार के पल्य या सागर में भी कि वास्तव में कालादि के परिमाण सूचक नहीं है किंतु कालादि की महान गणना जानने के लिए उपमा मात्र सहायक हैं। शास्त्र प्रमाण भी तत्वार्थसूत्र, अध्याय ३, मूलसूत्र ६, २९, ३८, अध्याय ४ मूलसूत्र २८, २९, ३३, ३०, ४२, अध्याय ८ मूलसूत्र १४, १५ इत्यादि।

इन सूत्रों के टीकाकारोंने पल्य और पल्योपम तथा सागर और सागरोपम के वास्तविक अन्तर पर विशेष ध्यान न देकर पल्योपम के स्थान में पल्य और सागरोपम के स्थान में सागर लिखा है जो एक प्रकार की अशुद्धि है।

(४) एक कल्पकाल २० कोड़ा कोड़ी सागरोपम का होता है जिस के एक भाग अवसर्पणी का चतुर्थकाल (जिस में वर्तमान चौबीसी हुई) ४२ सहस्र वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागरोपम का है। इसी लिए एक सागरोपम के वर्षों की उपरोक्त संख्या को एक कोड़ा कोड़ी से गुणा करने से उपरोक्त २७ अङ्क और ४९ कुल ७६ अंक प्रमाण संख्या एक कोड़ा कोड़ी सागरोपम

के वर्षों की प्राप्ति हो जाती है। इस संख्या में से ४२ सहस्र वर्ष घटा देने से जो संख्या प्राप्त होगी वह पूर्ण चतुर्थ काल के वर्षों की संख्या है जो ७६ अंक प्रमाण है।

(५) श्री ऋषभ देव जी महाराज का निर्वाण चतुर्थ काल के शेष रहने में ३ वर्ष साढ़े आठ मास पूर्व हुआ और श्री महावीर जी का निर्वाण पंचम काल के आरम्भ से इतने ही काल अर्थात् ३ वर्ष, ८॥ माह पूर्व हुआ। इस लिए प्रथम तीर्थंकर के निर्वाण काल से अंतिम तीर्थंकर के निर्वाण काल तक का अंतर ठीक उतना ही है जितना पूर्ण चौथा काल।

शास्त्र प्रमाण— श्री पद्म पुराण पर्व २० जहां चौथे काल का वर्णन करते हुए २४ तीर्थंकरों के अंतराल काल का कथन पूर्ण किया है। तथा हरिवंशपुराण सर्ग ६० श्लोक ५४८, ५४९ जहां २४ तीर्थंकरों के अंतराल कालादि का कथन पूर्ण करके श्री महावीर स्वामी के ११ गणधरों की आयु का कथन है उस से आगे।

(६) अब यदि प्रथम तीर्थंकर के निर्वाण से अंतिम निर्वाण तक के अंतराल काल अर्थात् पूर्ण चतुर्थ काल के वर्षों की संख्या में श्री वीर नि० संवत् जोड़ दें तो हमारा अभीष्ट श्री ऋषभ निर्वाण संवत् प्राप्त हो जायगा जिस के वर्षों की संख्या बड़ी है, जो कई जैन समाचार पत्रों में प्रकाशित हो चुकी है।

नोट— जिन महाशयों को यह भी जानना अभीष्ट हो कि इतने अधिक बड़े पल्य प्रमाण भोग भूमि के ७ दिन तक की उमर के बालक के बहुत ही छोटे छोटे रोमों या बालाग्रों की उपरोक्त संख्या ४५ अंक प्रमाण किस प्रकार निकाली गई है वह पुस्तक में थोड़े इसी विषय सम्बंधी कथन को ध्यान पूर्वक पढ़ें।

श्री श्लोकवार्तिक तथा श्री गोम्मटसारादि में सब कुछ मौजूद है। यदि तब भी समझ में न आवे तो मुझ से पत्र व्यवहार करें। तथा किसी प्रकार की शंका उपरोक्त लेख में हो तो वह भी प्रगट करें। किसी जैन समाचार पत्र द्वारा भले प्रकार समझा देने का प्रयत्न किया जायगा। किमधिकम्।

नोट—इस लेख में यह बताया गया है कि महावीराचार्य कृत गणितसार में केवल २७ अंक प्रमाण की गिनती है और इस से अधिक की गिनती नहीं दृष्टि में आती। परन्तु हमने 'दिगम्बर जैन' वर्ष ५ अंक ५ और सम्वत् १९६८ में "अंकावली" नामक लेख में ५७ अंक प्रमाण की गिनती और नाम बताये हैं जो इस प्रकार हैं —

एक, दश, सय, सहस्र, दहसहस्र, लक्ष, दहलाख, कोट, दहकोट, अरब, दहअरब, खरब, दहखरब, निखर्व, दहनिखर्व, मीरज, दहमीरज, पद्म, दहपद्म, पारन, दहपारन, सेम, दह सेम, रतन, दहरतन, नखड, दहनखड, सुघट, दहसुघट, ग्राम, दहग्राम, प्रसट, दहप्रसट, हार, दहहार, मन, दहमन, धड़क, दह धड़क, मव, दहमव, अंक, दहअंक, अहोनी, दहअहोनी, मोहो, दहमोहो, पार, दहपार, कर्णी, दहकर्णी, खोर, दहखोर, धर्मी, दह धर्मी, घंटा, दहघंटा।

यह गिनती के नाम हमने एक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तक से प्रकट किये थे। इस प्रकार इस से ज्यादे की गिनती के नाम भी शायद किसी और प्राचीन ग्रंथ में मिल जाना सम्भव है जिस से कि यह ऋषभजिनाथ सम्वत के ५८ अंक सुगमता से गिने जासकें।

संपादक॥

यह रिषभसंवत अंग्रेजी में इस प्रकार पढा जाता है।

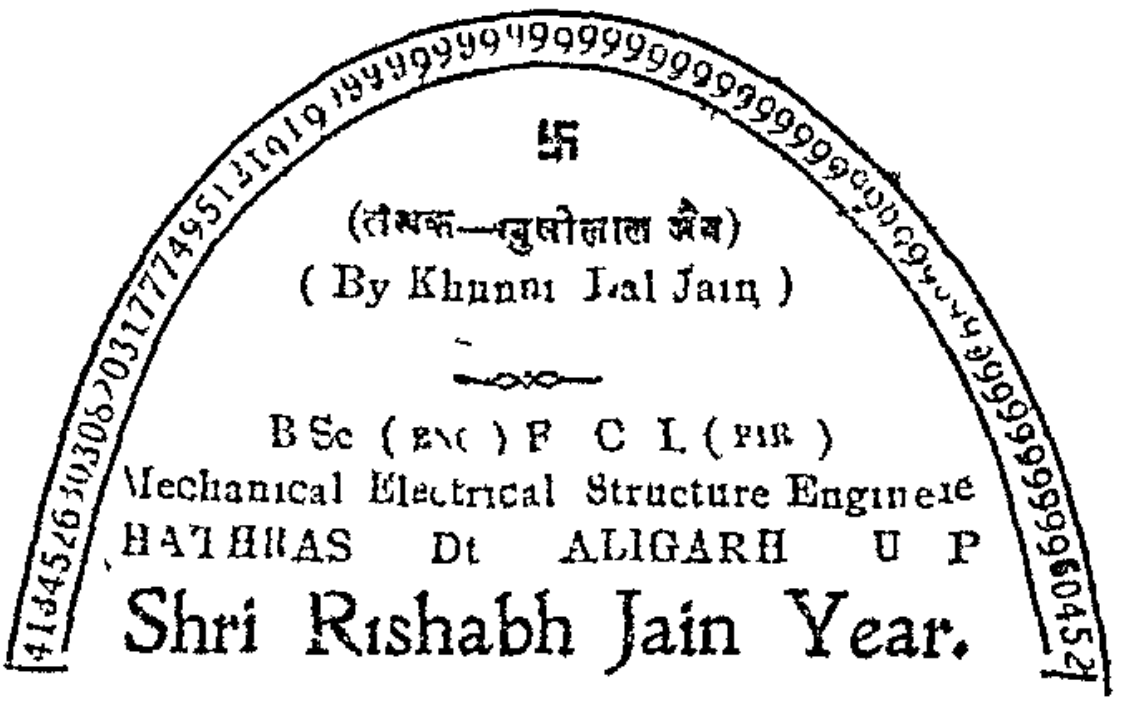

41345263030820317774951219199999999999999999999999999999999999999960452

卐

(लेखक—खुन्नीलाल जैन)
(By Khunni Lal Jain)

B Sc (ENG) F C L (FIR)
Mechanical Electrical Structure Engineer
HATHRAS Dt ALIGARH U P

Shri Rishabh Jain Year.

Four thousand one hundred and thirtyfour dodecallion, Five hundred twentysix thousand, three hundred and three monodecallion, eightytwo thousand and thirtyone decallion, seven hundred seventyseven thousand, four hundred and ninetyfive nonellion, one hundred twentyone thousand, nine hundred and nineteen octallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine heptallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine hexallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine pentallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine quadrillion, nine hundred ninetynine thousand nine hundred and ninetynine trillion, nine hundred

ninetynine thousand nine hundred and ninetynine billion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine million, nine hundred sixty thousand four hundred and fifty two

(Shri Mahavir Jain Year, Two thousand four hundred and fiftytwo)

॥ मंगलाचरणम् ॥

वंदौ वानी भगवती, विमल जोत जग मांहि ।
भ्रम ताप जासौ मिटै, भवि सरोज विकसाहि ॥
गौतम गुरु के पद कमल, हृदय सरोवर आन ।
नमो नमो नित भावसों, करि अष्टांग विधान ॥

प्रिय सज्जनो व बहिनो ! आज इस बात के जानने की अति आवश्यकता है कि हमारे देव गुरु कौन हैं और उनका धर्मोपदेश क्या है ? इस हेतु जो वचन जैसे महान पर्वत में राई समान जिन आगमों व विद्वानों द्वारा मैंने अवगत किया है उसका अति संक्षेप कुछ यहां प्रगट करता हूं । आशा है कि मेरी त्रुटियों पर क्षमारूपी

भाव रखते हुए गुण ग्रहण करने जैसे हँस मिश्रित दूध—जलमें से दूध को पीलेता है और जल को छोड़ देता है।

हम को नित्य षट कर्म करना चाहिए। यानी (१) देव पूजा (२) गुरु स्तवन (३) स्वाध्याय (४) संयम (५) तप और (६)। दान। इन का पूरा २ वर्णन जिन आगमों से मालूम करना चाहिए। कुछ संक्षेप से आगे लिखता हूं।

यह जीव अनादि काल से संसार के दुखों से कष्ट उठा रहा है। और इसके साथ क्रोध मान माया लोभादि कषायों का इस तरह सम्बन्ध हो रहा है जिस तरह कि "तिल में तेल" इस आत्मा के गुण का प्रकाश करना, निर्जरा और संवर द्वारा, यही मुख्य कर्तव्य है। जीव राम एक है जैसे आम शब्द एक है परंतु इस की किस्में कई कई प्रकार की हैं जैसे बम्बई, मालदई, तोतापरी इत्यादि इसी प्रकार हर जीव की आत्मा भिन्न २ है और शक्ति बराबर है मगर वह शक्ति कर्म अपेक्षा दब कर प्रथक प्रथक है। इस लिए पुद्गल ग्रहण भिन्न २ है। जैसे मनुष्य, देव, तिर्यंच नारकी इत्यादि।

"संवर" का अर्थ आश्रव का रोकना यानी कर्मों को न आने देना और "निर्जरा" का अर्थ लगे-हुए कर्मों को दूर करना जैसे एक रत्नमई पेटिया कूडे से दबी हुई है। उस पर कूडा न गिरने देना नाम संवर है और जो कूड़ा पड़ा हुआ उसको साफ कर देना नाम निर्जरा है।

इसी तरह इस जीव का गुण स्वभाविक केवल ज्ञान है सो सुनिमित्त द्वारा प्रगट हो सकता है। इस जीव का शत्रु मोह है कर्मों वस संसार में भ्रमण कर रहा है। इस आत्मा की तीन अवस्था होती है, यानी बहिरात्म, अन्तरात्म और परमात्म।

जिसको आत्मा पर द्रव्य में ममत्व करती है जैसे यह मेरा यह तेरा इत्यादि, यानी अज्ञान अवस्था उसको बहिरात्म कहते हैं। जब जीव इस अवस्था को छोड ज्ञानरस पीता हुआ निजानंद रस में आता है तब इस की हालत संसारियों के निकट आश्चर्य जनक

हो जाता है और संसारी विभूत विषय न हे हटती है। यहाँ कि गृहस्थ अवस्था को त्याग देता है और अपनी आत्मा में लीन हो जाता है। योनी—

"ऐसा की निस्पृह शान्त पाणिपात्रो दिगम्बर ।
कदाह समविष्यामि कर्मनिर्मूलनक्षम ॥"

इस पवित्र इच्छा को अपने हृदय—कारण में रखते हुए सामाजिक सुखोत्पादक सार्वभौमिक सम्पत्ति को लात मार कर निर्जन वन में पर्वत की कन्दराओं का आश्रय लिया करते हैं और ससार महारुहका निर्मूल कर स्व शुद्धात्मस्वरूप मोक्ष नगर का मार्ग सरल किया करते हैं।

सो ऐसी अवस्था को अन्तराम या महात्मा कहते हैं। और तपों और ध्यान द्वारा जब और आगे बढ़ता है तो घातिया, मोहनीय, दर्शनावर्णीय, ज्ञानावर्णीय और अन्तराय) कर्मों का क्षय कर केवल ज्ञान उपार्जन कर "परमातम" अवस्था में पहुंच जाता है। यानी ईश्वर परमात्मा, सत्य हितोपदेशक वीतराग हो जाता है। जिनकी समय निरक्षरीय वाणी दिव्य ध्वनि चांदनी सी वर्षा करती है, जसे समय तात परमता है। उनके तीन लोक दर्पण वत प्रतिभासता है। आयु कर्म (अघातीय कर्म) के पूर्ण होने पर सिद्ध हो जाते हैं यानी तीन लोक के शिखर पर जा विराजते हैं। इस जीव का स्वभाव उर्द्ध गमन है कर्मों से रुक कर संसार म भटकता है जब कर्मों का क्षय कर देता है तब इस को रोकने वाला कोई नहीं। आवागमन मिट गया इस लिए पुद्गल रहित हो गए। निरञ्जन निराकार पद ग्रहण हो गया। संसारी जीव इन को सहस्रों नामों से पुकार कर अपना कर्म रूपी मैल धोते हैं। जैसे सगाई द्वारा सुवर्ण धोया जाता है। उन नामों को मंत्र भी कहते हैं। उस में अचित्य शक्ति है यानी God (गोड) खुदा, परमात्मा, ईश्वर, सर्वज्ञ केवल ज्ञानी, ब्रह्मा, अर्हन्, सिद्ध, जिनेंद्र, जिन भगवान, जिन राज, वीतराग, तीर्थंकर, इत्यादि इस तरह यह हमारा हितकारी है। उनका धर्मोपदेश हम

को मोक्ष मार्ग का दर्शाने वाला है। उनका मार्ग हम भी प्राप्त कर सकते हैं। वह मार्ग तीन रत्न द्वारा यानी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र अङ्ग्रेज़ी में "Right Belief, Right Knowledge and Right Conduct" और उर्दू में "यकीन सादिक, इल्म सादिक और अमल सादिक कहते हैं" प्राप्त हो सकता है। ऐसा ईश्वर देव, देवों का देव महादेव, परमात्मा गुरु १८ दोष रहित होना चाहिये। वे दोष यह हैं जन्म Birth, जरा Oldage, रोग Disease, मरण Death, क्षुधा Hunger, तृष्णा Thirst, निद्रा Sleep, स्वेद Sweat, अरति Pain, खेद Restlessness, चिंता Anxiety, मोह Delusion, विस्मय Wonder, मद Pride, भय Fear, शोक Sorrow, राग Attachment, द्वेष Repulsion—

भावार्थ, सच्चा ईश्वर वही है, जो:—

न द्वेषी हो न रागी हो, सदानन्द वीतरागी हो।
वह सब विषयों का त्यागी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥टेक॥
न खुद घट घट में जाता हो, मगर घट घट का ज्ञाता हो।
वह सत् उपदेश दाता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥
न करता हो न हरता हो, नहीं अवतार धरता हो।
मारता हो न मरता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

ज्ञान के नूर[1]* से पुरनूर हो, जिसका नहीं सानी[2]।
सरासर नूर नूरानी, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

न क्रोधी हो न कामी हो, न दुश्मन हो न हामी[3] हो॥
वह सारे जगका स्वामी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

वह जाते पाक हो, दुनियाँ के झगड़ों से मुबर्रा[4] हो।
आलिमुलग़ैब[5] हो बेऐब[6] ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

दयामय हो शान्ति हो, परम वैराग्यमुद्रा हो।
न जाबिर हो न काहिर हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥
निरञ्जन निर्विकारी हो, निजानन्दरसविहारी हो।
सदा कल्याणकारी है, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥
न जगजञ्जाल रचता हो, करम फल का न दाता हो।
यह सब बातों का ज्ञाता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥
वह सच्चिदानन्दरूपी हो, ज्ञानमय शिव सरूपी हो।
आप कल्याणरूपी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥
जिस ईश्वर के ध्यान सेती, बने ईश्वर कहे न्यामत।
वही ईश्वर हमारा है, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥

* १ प्रकाश। २ बराबर का। ३ सहायक। ४ रहित। ५ सर्वज्ञ, आगे पीछे की छिपी हुई बातों को जानने वाला। ६ जुलम करने वाला, अन्यायी। ७ क्रोधी, दुष्ट अन्यायी।

परमात्मा कर्मों रहित निर्दोष है हम स सारी कर्मों सहित दोषी हैं हम को ईश्वर की श्रेष्ठ भक्ति और गुणानुवाद करना चाहिए। जिस भवन में उनकी यथावत प्रतिमा विराजमान की जाती है उसको "चैत्यालय" कहते हैं आज कल अधिकतर जिन मंदिर या जैन मंदिर भी कहते हैं। जो भगवान परमात्मा के मार्ग पर चलते हैं उनको जैनी या श्रावक कहते हैं। ऐसे सर्वज्ञ परमात्मा के धर्मोपदेश वाणी को जिन वाणी, जिनवाणी माता, सरस्वती, शारदा और श्रुत कहते हैं। क्यों कि जैसे माता बुद्धहीन बालक को संसारी मार्ग में मिष्ट वचनों द्वारा प्रबल पुष्ट कर देती है उसी तरह यह जिन वाणी संसारी जीवों को धर्म मार्ग में निपुण कर अक्षय पद दिला देती है। हम बारम्बार ऐसे निर्दोष देव और जिन वाणी को नमस्कार करते हैं। हम को नित्य ऐसे मंदिर में जाकर जिनेंद्र दर्शन भक्ति व पूजा करना चाहिए। पूजा कई प्रकार से की जाती है —

भ स्तामर, दर्शन पाठादि से ईश्वर भक्ति का एक नमूना मालुम हो सकता है भ क्तजन हृदय भीज कर रोमांच खड़े हो जाते हैं। जैनियों को यह न समझना चाहिए कि जैन धर्म हमारे कुल की दौलत है यह जिनेन्द्र धर्म जीव मात्र का धर्म है। जिन या जैन से भगवान का अर्थ है कि जिन्होंने कर्म शत्रुओं को जीत लिया है इस लिए उस धर्म को जैन धर्म कहते हैं। यह जैन धर्म "दिगम्बर" से प्रगट हुआ है यानी जिस गुरु के दिशाए ही वस्त्र हों यानी निर्ग्रन्थ। जैन धर्म पक्ष रहित वीतरागता लिए हुए है। हमको चार रत्नों की परीक्षा अवश्य करनी चाहिए क्यों कि हमको हमारे श्रद्धान मुताबिक फल मिलेगा। यथावत श्रद्धान करने वाले को सम्य ग्दृष्टि (True believer) कहते हैं।

साचो देव सोई जामें दोष को न लेश कोई।
वही गुरु जाके उर काहू की न चाह है॥
सही धर्म वही जहा करुना प्रधान कही।
ग्रन्थ जहा आदि अन्त एक सौ निवाह है॥
यही जग रत्न चार इन को परख यार।
साचे लेहु झूठे डार नर भौ का लाह है॥
मानुष विवेक विना पशु की समान गिना।
तातें यह ठीक बात पारनी सलाह है॥

और सुनिये—

पंडित भूधरदास जी का षट कर्मोपदेश।

अघ अंधेर आदित्य नित्य स्वाध्याय करिज्जै।
सोमोपम संसार ताप करलिज्जै॥

जब चिन्तूं तब सहस्र फल लक्खा गमन करे ।
कोड़ा कोड़ि अनन्त फल जब जिनवर दिट्ठे ॥ १४ ॥
॥ इति दर्शनस्तोत्र सम्पूर्णम् ॥

जिन दर्शन में अचिन्त्य लाभ और फल है जिनेन्द्र भगवान
मुद्रा शांत रूप पद्मासन व खड्गासन ध्यानमग्न होती है।
मूलाचार जी प० ५ गाथा ५०२ पत्र २०३ में वर्णन है।

वीतराग जिनराज का दर्शन करहिं नवीन ।
तिनका निष्फल जन्म है जे दर्शन हीन ॥

दर्शन में कई प्रकार के लाभ हैं, यथापन अनुभव स
मालुम हो जाता है। इसलिए प्राचीन समय में या अब भी
कहीं या तीर्थ क्षेत्रों में आपने देखा या सुना होगा कि जिन
जैन मंदिर के शिखर के चारों तरफ आलय में स्थापित की
करती थी या मौजूद है। यह अब भी नियम है कि जैन मन्दि
चारों तरफ आलय बनाये जाते हैं। यह सब इसी वास्ते कि
धर्म जीव मात्र का धर्म है ताकि चाण्डालादि भी अपना कर
कर सके परन्तु आज कल यह प्रचार बन्द सा होता जाता है

ऐसे महा पवित्र (चैत्यालय) जिन या जैन मंदिर में
कर शुद्ध वस्त्र पहन प्रमाद अभिमान रहित विनय सहित
चाहिये। रोगी हाथ पैर धो वस्त्र बदल कर जा सकता है
शराब पीकर, वेश्या तथा स्त्री प्रसंगादि अभिमान सहित,
रहित वाला जैन मंदिर में प्रवेश न करे क्यों कि ऐसी हालत
पाप बन्ध मई हो जाता है और योग्य हालत से जाने में पाप
छूट जाता है आपने सुना भी होगा कि बहुत से हमारे अजैन
भी यों कहते हैं कि "जैन मंदिर में नहीं जाना चाहे हाथी के
दब जाना" सो हे भाइयों यह कहावत तो ठीक है मगर
हालत में नहीं जाना सो इसका विचार उपर्युक्त वाक्यों
होगा। दूसरा दृष्टांत यह है कि जब तक हम धर्म का स्वरूप
चले जावेंगे, तब तक सब मानने को तय्यार होंगे
जहाँ "जैन धर्म" शब्द कह दिया जावे, बस बहुत से

पश ग्रहण कर जाते हैं। इस लिए यह कथन यहां पर इतना खुलासा लिखा गया है। हम आशा करते हैं कि पण्डित बुद्धिमान चतुर सज्जन निर्पक्ष न्याय सहित विचार करेंगे। जैन मंदिर में अयोग्य हालतों और कुभाना से जाना मने इस वास्ते किया गया है कि जिन धर्म में मनुष्य पर दया की शक्ति है उसका अविनय से उनको हानि होने की सम्भावना है।

देखिए श्रीमान वीरचन्द राघव गांधी B A. M R, A S The Jain delegate to the Parliament of Religions, chicago U S A (1893) जैन फिलोसफी में लिखते हैं— (Page 77)

There is a verse of two lines, the meaning of the second being connected with the first & these two lines must be interpreted together So is the Case with this expression the real fact is that the Brahmins who had been at certain epochs in the history of india inimical to the Jains got hold of the second line only which they interpreted to mean "Even if a person is going to be killed by an elephant he ought not to go into the Jain temple" while if the meaning is taken with the first line, it is this— "when a person has killed an animal, or any living thing or has returned from an immoral house or a visious place, or if he has drank wine, then he ought not to pollute the Jain temple even if he is followed by an elephant"

जैन मन्दिर में हम को निम्न लिखित ८४ आसादना दोष नहीं लगाना चाहिए हर जैनी भाइयोंको यह कण्ठस्थ करलेनाचाहिए चैत्यालय (जैन मंदिर) की स्थापना विषय तथा उसका कितनाबड़ा भारी महत्व है सो श्री पद्मपुराण (जैन रामायण) पर्व ८२ सप्त ऋषियों का उपदेश जो श्री गुरु के स्वरूप कथन के आगे लिखा है, मालुम करना।

८४ आसादना दोष श्री जिन मदिर मे नहीं लगाना।

निम्न लिखित ८४ आसादना टालकर सम्यक् सद् ही और समासका जिन मंदिर मध्य, निज मनमें मर्याद रखना योग्य है, विरुद्ध वर्ताव करना पाप बन्धका कारण है।—

१ मन्दिरमे खासी थूक खखारना नहीं।
२ मल मूत्र वायु वसारना नहीं।
३ वमन करना तथा कुरला करना नहीं।
४ आंख, नाक, कानका मैल निकालना नहीं।
५ पसीना तथा शरीर का मैल डालना नहीं।
६ हाथ पाव के नख तोड़ना काटना नहीं।
७ फोरा खुजाना नहीं, घाव पट्टी करना नहीं।
८ हाथ पाव शरीर दबाना नहीं।
९ तैल मर्दन तथा सुगन्ध आदि लगाना नहीं।
१० पाव पसारना तथा गुप्त अङ्गादि दिखाना नहीं।
११ पाव पर पाव धरना तथा ऊंचे आसन बैठना नहीं।
१२ उगली चटकाना तथा फोड़की खाल चाटना नहीं।
१३ आलस्य तोड़ना, जंभाई, छींक लेना नहीं।
१४ भीतके सहारे बैठना तथा खम सहारे बैठना नहीं।
१५ शयन करना तथा बैठे हुये ऊंघना नहीं।
१६ स्नान उबटन तेल क्रिया करना नहीं।
१७ गर्मीसे पंखा तथा रूमालसे हवा लेना नहीं।
१८ जाड़ेमे आगसे तापना नहीं।
१९ कपड़ा धोती आदि धोना सुखाना नहीं।
अधो अंगमें खाज खुजाना नहीं।

२१ दात मजन तथा दातोंमें सींक करना नहीं ।
२२ पटा कुर्सी खाट पलग पर बैठना नही ।
२३ गद्दी तकिया लगाके बैठना नहीं ।
२४ ऊचे आसन बैठके शास्त्र बाचना नहीं ।
२५ चमर, छत्र अपने ऊपर कराना नही ।
२६ शस्त्र साथके कमर बाधके आना नही ।
२७ घरसे कोई सवारी पे बैठके आना नहीं ।
२८ जूता, खडाऊ मोजा तथा ऊनके वस्त्र पहनके आना नही ।
२९ नङ्गे सिर मदिरमें बैठना नहीं ।
३० शृगार विलेपन तिलकादि करना नही ।
३१ दर्पण मुख देखना केश तिलक सवारना नही ।
३२ डाढी मूछोंपर ताव देना नही ।
३३ हजामत तथा केशलोंच करना नही ।
३४ पान, तमाखू, बीडी वगैरह खाना नही ।
३५ खाद्य इलायची, लौंग सुपारी आदि खाना नहीं ।
३६ भाग माजूमका नशा कर मदिरमें आना नही ।
३७ फूलोंकी माला कलगी हार पहरके आना नही ।
३८ पगडी साफा मदिरमें बैठके बाधना नही ।
३९ भोजन पान मदिरमें करना कराना नहीं ।
४० औषध चूर्ण गोली आदि मदिरमें खाना नहीं ।
४१ रात्रिको पूजन तथा फलादि चढाना नहीं ।
४२ जलक्रीडा होली मदिरमें खेलना नही ।
४३ व्याह सगाई नेग कारजकी चर्चा करना नहीं ।
४४ सग सम्बन्धी मित्रादिक से मिलनी भेट लेनी देनी नही ।
४५ कुटुम्ब सुश्रूषा मान आदर करना नही ।

४६ जुहार मुजरा, बन्दगी, राम राम, करना नहीं।
४७ राजा तथा सेठ किसीका सन्मान करना कराना नहीं।
४८ बिरादरी सम्बन्धी पंचायत मंदिरमें करना नहीं।
४९ लड़ाई झगड़ा विसम्वाद क्लेश करना नहीं।
५० गाली भंड वचन कटुक वचन कहना नहीं।
५१ झूठ गर्हित सावद्य अप्रिय वचन कहना नहीं।
५२ लाठी मुष्टि शस्त्र प्रहार करना नहीं।
५३ हांसी ठट्ठा मसखरी छेड़छाड़ करना नहीं।
५४ रोना थिसूरना हिचकी लेना करना नहीं।
५५ स्त्री कथा तथा कामभोगकी वार्त्ता करना नहीं।
५६ चौपड़ शतरंज गंजफा मंदिरमें खेलना नहीं।
५७ राजादिकके भयसे मंदिरमें छुपना नहीं।
५८ गृहकार्य लौकिक कार्यकी वार्त्ता करनी नहीं।
५९ धन उपार्जनके व्यापारकी वार्त्ता करनी नहीं।
६० वैद्यक ज्योतिष नाड़ी आदि मंदिरमें देखना नहीं।
६१ दुष्ट सङ्कल्प विकल्प मंदिरमें करना नहीं।
६२ पच्चीस प्रकारकी विकथा करनी नहीं।
६३ देन लेन आदि कार्यकी संभाल रखना नहीं।
६४ चमड़ा हाड़ दांत सींग सङ्ख कौड़ी नख लाना नहीं
सीप इत्यादिक रतन लगाकर तथा मातमल् सर्जे के घर
या दुशाला कोई ओढ़कर व फेल्टकेप(टोपी) पहन आना
६५ हरित फलफल सचित वस्तु मंदिरमें लाना नहीं।
६६ व्यापारका लेन देन किसीसे करना नहीं।
६७ रिसवत घूस वगैरह लेना देना नहीं।
६८ रत्न रुपया वस्त्रादि कोई चीज मंदिरमें परखना नहीं

६९ घरका द्रव्य तथा कोई वस्तु मँदिर में रखना नहीं
७० चढ़ा द्रव्य मँदिर के भँडार में रखना नहीं ।
७१ निर्माल्य द्रव्य मँदिर का मोल लेना नहीं ।
७२ कोई चीज का भाग हिस्सा करना नहीं ।
७३ जूवा होड वगैरह मँदिर में करना नहीं ।
७४ वैश्या नाच भँडई रास मँदिर में करना नहीं ।
७५ कसरत तथा नटकला मँदिर में करना नहीं ।
७६ अनबोलते बालक को मँदिर में लाना खिलाना नहीं ।
७७ शुक, मैना, बुनबुल आदि पक्षी पालना नहीं ।
७८ दरजी का व कलाबांत का काम करना नहीं ।
७९ गहना आभरण सुनार से मँदिर में गढाना नहीं ।
८० सिवाय दिगम्बर जैन ग्रंथों के और ग्रंथ लिखना लिखाना नहीं ।
८१ विकार उपजाने वाले चित्राम लिखना नहीं ।
८२ पशु, गाय, भैंस, पक्षी, सुवादि बाधना नहीं ।
८३ पापड मगौडी दाल धोना सुखाना नहीं ।
८४ अभिमान सहित, विनय रहित मँदिर में प्रवेश करना नहीं ।

इस संसार में मोह वश पाप क्रिया करते हुए अनादि से भ्रमण कर रहे हैं। संसार में कितना सुख दुख है सो निम्न प्रकार जानना।

संसार रूपी वृक्ष (मोहरस स्वरूप)

इस 'मोहरस स्वरूप' का परिचय श्री अमितगति इन धर्म परीक्षा ग्रन्थ में इस प्रकार बताया है—

एक भव्य पुरुष ने अवधिज्ञानी जिनमति नामक मुनिमहाराज को नमस्कार कर के विनय सहित पूछा कि हे भगवन् ! इस असार

४६ जुहार मुजरा, बन्दगी, राम राम, करना नहीं ।
४७ राजा तथा सेठ किसीका सन्मान करना कराना नहीं ।
४८ बिरादरी सम्बन्धी पंचायत मंदिरमें करना नहीं ।
४९ लड़ाई झगड़ा विसम्वाद क्लेश करना नहीं ।
५० गाली भंड वचन कटुक वचन कहना नहीं ।
५१ झूठ गर्हित सावद्य अप्रिय वचन कहना नहीं ।
५२ लाठी मुष्टि शस्त्र प्रहार करना नहीं ।
५३ हांसी ठट्ठा मसखरी छेड़छाड़ करना नहीं ।
५४ रोना बिसूरना हिचकी लेना करना नहीं ।
५५ स्त्री कथा तथा कामभोगकी वार्त्ता करना नहीं ।
५६ चौपड़ शतरंज गंजफा मंदिरमें खेलना नहीं ।
५७ राजादिकके भयसे मंदिरमें छुपना नहीं ।
५८ गृहकार्य लौकिक कार्यकी वार्त्ता करनी नहीं ।
५९ धन उपार्जनके व्यापारकी वार्त्ता करनी नहीं ।
६० वैद्यक ज्योतिष नाड़ी आदि मंदिर में देखना नहीं ।
६१ दुष्ट सङ्कल्प विकल्प मंदिरमें करना नहीं ।
६२ पच्चास प्रकारकी विकथा करनी नहीं ।
६३ देन लेन आदि कार्यकी सौगंद खाना नहीं ।
६४ चमड़ा हाड़ दांत सींग सङ्ख कौड़ी नख लाना नहीं तथा
सीप हड्डीके रत्न लगाकर तथा मखमल्ल सर्ज के वस्त्र पहन
या दुशाला लाई ओढ़कर व फल्टकप(टोपी)पहन आना नहीं ।
६५ हरित फलफूल सचित्त वस्तु मंदिरमें लाना नहीं ।
६६ उगाहीका लेन देन किसीसे करना नहीं ।
६७ रिसवत घूस वगैरह लेना देना नहीं ।
६८ रत्न रुपया वस्त्रादि कोई चीज मंदिरमें परखना नहीं ।

६९ घरका द्रव्य तथा कोई वस्तु मँदिर में रखना नहीं
७० चढ़ा द्रव्य मँदिर के भँडार में रखना नहीं ।
७१ निर्माल्य द्रव्य मँदिर का मोठ लेना नहीं ।
७२ कोई चीज का भाग हिस्सा करना नहीं ।
७३ जूवा होड वगैरह मँदिर में करना नहीं ।
७४ वैश्या नाच भँडई रास मँदिर में करना नहीं ।
७५ कसरत तथा नटकला मँदिर में करना नहीं ।
७६ अनबोलते बालक का मँदिर में लाना खिलाना नहीं ।
७७ शुक, मैना, बुलबुल आदि पक्षी पालना नहीं ।
७८ दरजी का व कलरबाँत का काम करना नहीं ।
७९ गहना आभरण सुनार से मँदिर में गढाना नहीं ।
८० सिवाय दिगम्बर जैन ग्रथों के और ग्रथ लिखना लिखाना नहीं ।
८१ विकार उपजाने वाले चित्राम लिखना नहीं ।
८२ पशु, गाय, भैंस, पक्षी, सुवादि बाधना नहीं ।
८३ पापड मगौडी दाल धोना सुखाना नहीं ।
८४ अभिमान सहित, विनय रहित मँदिर में प्रवेश करना नहीं ।

इस संसार में मोह धर्म पाप किया करते हुए अनादि से भ्रमण कर रहे है। संसार में कितना दुख सुख है सो निम्न प्रकार जानना।

संसार रूपी वृक्ष (मोहरूप स्वरूप)

इस 'मोहरूप स्वरूप' का परिचय श्री अमितगति कृत धर्म परीक्षा ग्रन्थ में इस प्रकार बताया है—

एक भव्य पुरुष ने अवधिज्ञानी जिनमति नामक मुनिमहाराज को नमस्कार कर के विनय सहित पूछा कि हे भगवन् ! इस असार

संसार में फिरते हुए जीवों को सुख तो कितना है और दुःख कितना है सो कृपा करके मुझे कहिए। यह प्रश्न सुनकर मुनिराजने कहा कि हे भद्र! संसार के सुख दुःख को विभाग कर कहना बड़ा कठिन है तथापि एक दृष्टांत के द्वारा किंचिन्मात्र कहा जाता है, क्योंकि दृष्टांत के बिना अल्पज्ञ जीवों की समझ में नहिं आता सो ध्यान देकर सुन।

अनेक जीवों कर भरे हुए इस संसार रूपी वन के समान एक महावन में दुर्योग से कोई पथिक (रस्तागीर) प्रवेश करता हुवा। सो उस वन में यमराज की समान सूंड को ऊंची किए हुए क्रोधायमान बहुत बड़े भयङ्कर हाथी को अपने सन्मुख आता हुआ देखा। उस हाथी ने उस पथिक को मीलों के मार्ग से अपने आगे कर लिया और उसके आगे आगे भागता हुआ वह पथिक पहिलें नहीं देखा ऐसे एक अंधकूप में गिर पड़ा। जिस प्रकार नरक में नारकी धर्म का अवलम्बन करके रहता है उसी प्रकार वह भयभीत पथिक उस कूप में गिरता गिरता सरस्तंब कहिए सेर की जड़ को अथवा बड़ की जड़ को पकड़ कर लटकता हुआ तिष्ठा। सो हाथी के भय से भयभीत हो नीचे को देखता है तो उस कूप में यमराज के दण्ड के समान पड़ा हुआ बहुत बड़ा एक अजगर देखा। फिर क्या देखा कि उस सरस्तंब की जड़ को एक श्वेत और काला दो मूस निरंतर काट रहे हैं जैसे शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष मनुष्य की आयु को काटते हैं।

इस के सिवाय उस कूप में चार कषाय के समान बहुत लम्बे २ अति भयानक चलते फिरते चारों दिशाओं में चार सर्प देखे। उसी समय उस हाथी ने क्रोधित होकर संयम को असंयम की तरह कूप के तटपर खड़े हुए वृक्ष को पकड़ कर जोर से हिलाया सो उसके हिलने से उस पर जो मधुमक्खियों का छत्ता था उसमेंसे समस्त मक्खियें निकल कर दुःसह वेदनाओं के समान उस पथिक के शरीर पर चिपट गईं। तब वह पथिक चारों तरफ मर्मभेदी पीड़ा देने वाली उन मधु मक्खियों से घिरा हुआ अतिशय दुःखित हो ऊपरि को देखने लगा। सो वृक्ष की तरफ मुख को उठाकर देखते ही उस के होठों पर बहुत छोटा एक मधुका बिंदु आपड़ा

सो यह मूर्ख उस नरक की बाधा में भी अधिक बाधा को कुछ भी दुःख न समझ, उस मधुबिंदु के स्वाद को लेता हुआ अपने को महा सुखी मानने लगा।

इस कारण वह अज्ञ पथिक उन समस्त दुःखों को भूलकर उस मधु करण के स्वाद में ही आसक्त हो फिर मधुबिंदु के पड़ने की अभिलाषा करता हुआ लटकता रहा। सो हे भाई! उस समय पथिक के जितना सुख दुःख है उतना ही सुख दुःख मनुष्यों का यानि रूप इस संसार रूपी घर में इस जीव के है।

सो जिनेंद्र भगवान ने कहा है कि वह वन तो पाप है, वह पथिक है सो जीव है। हस्ती है सो मृत्यु (यमराज) के समान है। वह नरककूप है सो जीव की आयु (उमर) है और शाखा है सो संसार है। अजगर है सो निगोद है। श्वेत श्याम दो मूषक हैं सो शुक्ल और कृष्ण दो पक्ष हैं, जो उमर को घटा रहे हैं। और चार सर्प हैं सो क्रोध मान माया लोभ ये चार कषाय हैं। तथा मधुमक्खियाँ हैं सो शरीर के रोग हैं। मधु के बिंदु का जो स्वाद है सो इंद्रिय जनित सुख (सुखाभास मात्र) है। इस प्रकार संसार में सुख दुःख का विभाग है। वास्तव में इस संसार में भ्रमण करते हुए जीवों के सुख दुःख का विभाग किया जाय तो मेरुपर्वत की बराबर तो दुःख है और सरसों की बराबर सुख है। इस कारण संसार का त्याग करने में ही निरंतर उद्यम करना चाहिए।

पूजादि अधिकार

हम को नित्य भगवान की पूजादि करना चाहिए। किसी २ स्थान पर किसी निजी कारण से कोई २ भाई या बहिनें हठ या अज्ञानता के कारण, किसी किसी भाई या जाति को प्रक्षाल पूजा से मना करते हैं जिस से आज्ञा, द्वेष बुद्धि फैल कर धर्म आयतनों पर आक्षेप होने लगता है सो ऐसे भाइयों से हमारा नम्र निवेदन है कि ऐसी बुद्धि से निरन्तर पाप बंध होता है। और किसी शास्त्र में किसी को निषेध नहीं लिखा है सिवाय अशुद्ध इत्यादि। परन्तु सब जो जिनेंद्र की पूजा प्रक्षाल का उत्साह दिया है लेकिन शास्त्रोक्त रीति से होना उचित है पतन तो सर्वथा कर सकते हैं यहाँ यह और प्रकाश करते हैं कि "स्त्री समाज" भी पूजा कर सकती है। देखिए पण्डित भूदरदास जी कृत " चरचा समा धान ग्रंथ" चरचा ८१ पृष्ठ ६० लिखित है:—

(१) सुलोचना पुत्री राजा अकंपन ने अष्टांद्रव्य पूजा करी (महापुराण)

(२) मैना सुन्दरी ने श्रीपाल के गंधोदक लगाया। अगर अभिषेक पूजा नहीं की तो शरीर के लिए इतना गंधोदक कहाँ से लाई।

(३) अंजना देवी के भवांतर में कनकोदरी पटरानी थी, कण्ठ राजा अरयानगर में प्रतिमा की स्थापना कर पूजा करी। एक दिन कनकोदरी ने दूसरी रानी लक्ष्मीमता की प्रतिमा मंदिर में बाहर रक्खी सो सयम श्रीनाम अर्जिका के उपदेश से मंदिर में वापिस ले आकर पूजा की। उस अविनय से अंजना ने इस जन्म में पवन जय पति से वियोग हुआ (देखो पद्मपुराण जैनी जैन रामायण में)

(४) वर्तमान में धर्मशाश्रम बम्बई के चैत्यालय में बहाँ स्त्रियाँ पूजादि करती हैं।

पूजा विना अभिषेक होता नहीं यह नियम है—क्योंके स्पर्श से दोष होता तो साधु महामुनि, स्त्री के हाथ का भोजन क्यों लेते जिस से उत्तम पात्रता भी शुद्ध होता क्यों को पूजा का निषेध नहीं है, और शास्त्र में कहा "निषेध" भी नहीं किया है।

प्रगट हो कि शास्त्रों में जैनियों को "महाजन" यानी "बड़े पुरुष यानी क्षत्रीय, तथा शूद्र को जानने वालों" को ग्रामीण बतलाया है। श्री आदि ऋषभदेव जी इक्ष्वाकुवंशी थे और उन्होंने ही कर्म भूमि की रचना की। पाठकों के जानार्थ जैनियों की चौरासी जातें प्रकाश करते हैं। यह सर्व जिनेन्द्र-पूजा प्रक्षाल कर सकते हैं।

जैनियों की चौरासी जातें।

१ खंडेलवाल	२२ [illegible]वाल	४३ कठनेरा	६४ [illegible]
२ ओसवाल	२३ मरलवाल	४४ लमेचू	६५ चतुर्थ
३ हूमड़	२४ [illegible]	४५ धाकड़	६६ [illegible]
४ बघेरवाल	२५ पद्मावती पोरवाल	४६ [illegible]	६७ सेतवाल
५ [illegible]वाल	२६ मोरटोया गोरवाल	४७ गोलाराड़ (गोलालार)	६८ पंचम
६ ओसवाल	२७ भटनागर	४८ [illegible]	६९ [illegible]
७ [illegible]	२८ [illegible]	४९ श्रीगौड़	७० [illegible]पुरी
८ करैया	२९ [illegible] ([illegible])	५० [illegible]	७१ [illegible] ([illegible])
९ अग्रवाल	३० [illegible]	५१ [illegible]	७२ [illegible]
१० पल्लीवाल	३१ नारायन (नारायना)	५२ गोलसिंहारे	७३ [illegible]
११ [illegible]	३२ [illegible]	५३ नरसिंहपुरा	७४ [illegible]
१२ [illegible]	३३ हरसोरा	५४ नागद्रह (नाग [illegible])	७५ [illegible]
१३ [illegible]	३४ हूमड़ (हूमड़)	५५ हूमड़ (हूंबड़)	७६ गरैया
१४ [illegible]	३५ [illegible]	५६ [illegible]	७७ [illegible]
१५ [illegible]	३६ [illegible]	५७ [illegible]	७८ [illegible]
१६ [illegible]	३७ [illegible]	५८ [illegible]वाल	७९ [illegible]
१७ [illegible]	३८ [illegible]	५९ [illegible]	८० [illegible]
१८ [illegible]	३९ [illegible]	६० [illegible]	८१ [illegible]
१९ पोरवाल	४० [illegible]	६१ [illegible]	८२ [illegible]
२० [illegible]	४१ [illegible]	६२ [illegible] ([illegible])	८३ [illegible]पुरी
२१ [illegible]	४२ [illegible]	६३ [illegible]वाल	८४ [illegible]

हमारे रहन से भाई बहुधा यह कहते हैं कि हम वैश्य जाति हैं। अब का अवलोकन करें। न्याय पूर्वक आप पहरा करें। मरदुमशुमारी में 'जैनियों' की जाति अलग रक्खी गई है इसलिये हर जैन व्यक्ति को "जैन जाति" कहना या लिखना या लिखवाना चाहिए।

कुछ जातियों का संक्षेप इतिहास प्रकट करते हैं।

नोट १—जैसवाल—जैन अङ्क १०—११ भाग १ पौष माघ शुक्ला सम्वत् २४७५ और सम्वत् २४४५ में प्रकाशित हुआ है। जैसवाल (जैसलमेर वाले) में कोई भेद नहीं इसके तीन भेद हुए उपरोतिया तरौंचिया और चरैरा। अलीगढ़ में राजा आरसिंह थे वहां पर जो भंडारी के काम पर रहे व कौल भंडारी कहाये। अलीगढ़ को कौल भी कहते हैं। जिला गुन दरहर में कुछ ठाकुर लोग हैं व हांके जैसवालों से गोत्र मिलते हैं। जैसवाल समस्त भारत में हैं परन्तु फिरोजाबाद, आगरे, अलीगढ़, धौलपुर, ग्वालियर, उज्जैनादि के आस पास ज्यादा हैं। वे प्राय राज्य व जमींदारी कार्य में हैं। पूर्वजों से वे "दीवानजी" तथा परवरी के पदों से प्राय पुकारे जाते हैं। जैसलमेर राज्य पर आपत्ति आने से वे भागकर इधर आये व वैश्यों के साथ रह कर और वैसा कार्य करने से प्राय वैश्य कहाने लगे। जैसलमेर वाले से जैसवाल समय परिवर्तन द्वारा होगया जैसलमेर का राजा इक्ष्वाकुवंश का क्षत्री था, उसके कुटुम्बी जैसवाल कहलाते थे और कई एक प्रमाणों से जैसवाल क्षत्री सिद्ध होते हैं। जैसवाल जाति अनादि से सर्वथा जैन है।

प्राचीन जैसवाल आचार्य।

नोट २—अब हम अपने प्रिय पाठकों को कुछ प्राचीन जैसवाल आचार्यों का संक्षिप्त परिचय देते हैं। यह वृतान्त प्राचीन पट्टावलियों से उद्धृत किया जाता है।

[illegible] ग्रन्थ की प्रतियों में गद्दावलियां और एक लेख मिलता है, जिसे पण्डित [illegible] जी ने लिखा है। आपने बाद पट्टावलियाँ, अपने ऐसे [illegible] है। जिन में एक तो [illegible] है और [illegible] काष्ठासंघ की पट्टावली में [illegible] गई थी और जिसके आधार पर हमने प्रथम [illegible] में [illegible] आचार्यों के नाम दिये हैं।

संवत्	तिथि	आचार्य	जाति
[illegible]	आसाढ़ सुदी १४	माघनन्दि	जैसवाल
[illegible]	फागुन वदी [illegible]	यशनन्दि	[illegible]
[illegible] २२	श्रावण सुदी ५	[illegible]	[illegible]

इसमें पट्टावली आपका भट्टारक मुनीन्द्र कीर्ति से प्राप्त हुई है। उसमें [illegible] आचार्यों का [illegible] विवरण है। इसमें हम नीचे उद्धृत करते हैं।

१. मिती [illegible] संवत् [illegible] स्वामी माघनन्दि जी। आपने [illegible] कुल का परिचय दिया है [illegible] आप गृहस्थ [illegible] वर्ष [illegible] आप [illegible] थे। आपने ४४ वर्ष [illegible] मुनिदीक्षा [illegible] ग्रहण किया था। आपकी शक्ति अगाध [illegible] थी। आप आचार्य पद पर [illegible] रहे। [illegible] महीने [illegible] हुए। आपकी सर्व आयु [illegible] वर्ष [illegible] महीने की थी। माघनन्दि [illegible] आचार्य हो गये हैं। [illegible] माघनन्दि मुनि [illegible] आपकी [illegible] पूजा [illegible]

२. मिती फाल्गुन वदी [illegible] दिन [illegible] भगवान् [illegible] विराज। आपने श्री [illegible] जाति के [illegible] थे। पश्चात् [illegible] हुए [illegible] परमेष्ठी पद [illegible] गृहस्थ अवस्था में [illegible] वर्ष रहे। आपके [illegible] और [illegible] विराजते थे। [illegible]

पद (मुनि) १७ वर्ष ५ मास और मासचरल द्वारा आचार्य पद पर आप ४० वर्ष ७ मास और ८ दिन रहे। पूर्ण आयु ८० वर्ष ४ मास और १३ दिन की थी। अनशन नामक मरण को धारण कर समाधिस्थ हुए। शिष्य प्रशिष्य मुनि और श्रावक अगणित थे। आपने विहार (देशाटन) खूब किया था। राजा महाराजा आपके परम भक्त थे।

२६—भाद्रपद वदी ५ सम्वत १६८२ श्री मदकीर्ति आचार्य पद को भूषित किया। आठवें वर्ष सुयोधन में विद्याध्ययन करने के लिए ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार कर गए। और ११ वर्ष ३ मास पश्चात समस्त शास्त्रों का पठन कर समस्त विषयों में प्रवीण हो गए। आपकी विद्वत्ता की समता करने वाला उस समय शायद ही कोई विद्वान हो। आपने ५३ वर्ष ३ मास तथा ११ दिन पर्यन्त आचार्य पद को अलंकृत किया। जैसवाल कुल को प्रकाशित करने वाले आप थे। पूर्ण आयु ८३ वर्ष ३ माह और कुछ दिन की।

उक्त तीन आचार्यों के अतिरिक्त इस पट्टावली में संख्या ८ पर यशोकीर्ति आचार्य को भी जैसवाल लिखा है। किन्तु आगे फाटक में जयसवाल या लिखा है। आर परन्तु पट्टावली में आपको आयलवाल ही लिखा है अतः हम उनका वर्णन भी यहाँ करते हैं—

८—मिती जेठ सुदी १० सम्वत १५७५ के दिन श्री आचार्य यशोकीर्ति महाराज ने आचार्य पद को विभूषित किया। आप बालपन से ही विरक्त थे। आपकी उग्र शक्ति दिव्य थी। गृहस्थ अवस्था में १२ वर्ष मात्र ही रहे। आप जैसवाल (आयलवाल) * थे। ३१ वर्ष पर्यन्त आप मुनि निपथ्य रहे। आपने ५८ वर्ष ८ मास और २१ दिन आचार्य पद में व्यतीत किए। आपकी पूर्ण आयु ८० वर्ष और १५ दिन की थी। आपके बाद ८० दिन पर्यन्त आचार्य पद रिक्त रहा।

दीमर्दी पट्टावली सम्पूर्ण की है। वह ईडर के भंडार से प्राप्त हुई है। उसमें प्राय आचार्यों का नाम मात्र है। नीचे कुछ इलाके में जैसवाले आचार्यों का नाम है—

* आयलवाल और जैसवाल को आपने एक कैसे लिखा है इस पर प्रकाश डालना चाहिए। —सम्पादक।

योपनन्दिपदज्ञानि तं दम्यवस्मिन् बलात्कार गणे विस्ये ।
सत्राभिवत पूर्व-पदाश वेदे श्री माघनन्दी नरदेव वंद्य ॥ २ ॥

वर्गर्धैर्यशोनंदी इन्द्रनंदी मार्गे ॥
पूज्यपाद परार्थ्यैयो गुणनंदी गुणाकरः ॥ ८ ॥
माणिक्यनंदी मेघेन्द्रः शान्तिकीर्तिगाशय ।
मेरुकीर्ति महाकीर्ति विष्णुनंदी दिवाकर ॥ ११ ॥

सम्पूर्ण पट्टावली को आपने अभी प्रकाशित नहीं किया है। इसी कारण है, पट्टावलि पारी प्रकट हुई है। इन पदों से ही यह भली भांति प्रकट हो जाता है कि प्राचीन काल में जैसवाल जाति इतनी सम्पन्न और विद्यासम्पन्न थी कि इसमें स्वामी माघनन्दी, यशकीर्ति और मेरुकीर्ति जैसे प्रचण्ड पाण्डित्यपूर्ण आचार्य विद्यमान थे। जिनके कारण जैसवाल जाति आज भी गौरवान्वित है।

जैसवाल भाइयों को अपने पूर्व गौरव स्मरण कर उसी उच्च स्थान को प्राप्त करने के लिए पुनः परिश्रम करना चाहिए।

एक प्रशस्ति में जैसवाल—

सहयोगी जैन मित्र के ४७ वें अङ्क में पूज्य पं० पन्नालाल जी बाकलीवाल ने जयपुर के पाटोदी के मन्दिर के एक ग्रंथ प्राकृत उत्तर पुराण की प्रशस्ति प्रकट की थी। जिससे विदित होता है कि यह ग्रंथ संवत् [illegible] में (नौ सौ वर्ष पूर्व) चौधरी टोडरमल्ल जी जैसवाल ने लिखा था। प्रशस्ति की प्रतिलिपि इतिहास प्रेमियों को उपयोगी होगी अतएव यहां उद्धृत की जाती है—

कार्तिकादि-श्वाति, उत्तरपुराण टिप्पणकं प्रभाचन्द्राचार्य विरचितसमाप्तं अथ नरेन्द्रोऽस्मिन् श्री वीर विक्रमादित्य राज्ये संवत् १०७४

वर्षे भादवा सुदी ५ बुद्ध दिने कुरु जांगल देशे सुल्तान सिकन्दर पुत्र सुलतान इब्राहिम राज्य प्रवर्त्तमाने श्री काष्ठासंघ, माथुरान्वये पुष्करगणे भट्टारक श्री गुणभद्र सूरिदेवा तदाम्नाये—जैसवाल चौ० (धुरा) टोडरमल्लु । चौ जगमापुत्र इदं उत्तर पुराण टीका लिखाया । शुभं भवतु । मांगल्य दधाति लेखक पाठकयो ॥ इस प्रशस्ति से पाठक यह अनुमान कर सकेंगे कि ४०० वर्ष पूर्व जैसवाल भाई इतने योग्य थे कि वे संस्कृत आदि पुराण जैसे महत्वशाली ग्रन्थ को लिखाकर पढ़ सकते थे। क्या उनकी तुलना हम लोगों से हो सकती है।

(जैसवाल—जैन पत्र अङ्क ८ कार्तिक शुक्ला २ स १०७८ वीर सं०२४४८ से उधृत)

नोट३—बाबू प्रभुदयाल और ज्ञानचन्द्र लाहौर कृत जैनतीर्थ यात्रा नम्बर २७ सन १९०१ पत्र १२३ में लिखा है कि सहारनपुर में ५०० घर सूर्यवंशी क्षत्री अग्रवाल जैनियों के हैं (यह ६ वीं जाति है)

नोट ४—८७ वीं जाति—ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी कीता शपर्व यात्रा, जिस को भारत वर्षीय दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी ने सन १९१२ ई०वी०२४३८ में प्रकाश किया। पत्रे १५ (पुरानी) लामची दास सूर्यवंशी "गोलालारे जैन" लिखा है। इन्होंने संवत १८२८ में निर्ग्रन्थ मुनि अवस्था धारण की थी।

नोट ५—इसी प्रकार सब जैन जाति के इतिहासों से मालूम करना पुस्तक बढ़ने के भय से और इतिहास संग्रह नहीं किए।

नोट ६—

* गज़ल *

जाति की सेवा करनी, यह पहला काम अपना ।
सेवा के वास्ते यह जीवन तमाम, अपना ॥ टेक ॥
तुम चाहे गालिया दो भर पेट निन्दा करलो ।
छोड़ो जो सेवा करनी, जीवन हराम अपना ॥
जीते जी मर मिटेंगे अच्छी बुरी सहेंगे ।
सेवा मगर करेंगे जब तक है चाम अपना ॥
सेवा को हम मरेंगे, जब तक कि हम जियेंगे ॥ जाति की० ॥

श्रीगुरु का स्वरूप

श्री गुरु महा मुनि का स्वरूप अन्तर आत्माधिपे पहिले कुछ कह चुके हैं, थोड़ासा और कुछ वर्णन करता हूं. वे १४ अंतरंग परिग्रह [मिथ्यात्व, वेद (स्त्री पुरुष नपुंसक से अनुराग) राग, द्वेष, हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा क्रोध मान माया और लोभ] और १० बाह्य परिग्रह [क्षेत्र वास्तु चांदी सोना, धन, धान्य दासी, दास, कुप्य भांड] से रहित होते हैं, २८ मूलगुण (५ महाव्रत, ५ समिति, ५ इंद्रियों का रोकना, ६ आवश्यक, ७ अवशेष) और ८४ लाख उत्तर गुण के धारक होते हैं, उनका तेरह प्रकार यानी ५ महाव्रत (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य परिग्रहत्याग), ५ समिति (ईर्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेपण, प्रतिष्ठापन) और ३ गुप्ति (मन, वचन काय) का चरित्र होता है, इसलिये यह दिगम्बर जैन धर्म तेरा पंथी कर भी पुकारा जाता है, ऐसे गुरु जिनके किसी प्रकार की चाह नहीं उनसे ही हमारा यथार्थ कल्याण हो सक्ता है उनकी स्तुति और गुणानुवाद से महापुण्य का आश्रव होता है, और पापों का नाश होता है हम अज्ञानता से वाजवक्त उनकी निन्दा कर बैठते हैं यह हमारी महा भूल है सामान्य पुरुषकी निन्दा करना पाप है तो ऐसे महात्मा की निन्दा करना क्या वज्र पाप न होगा। ऐसे महा मुनि के भाव

निर्मल विकार रहित होते हैं जैसे तुरन्त जन्मे बालक के भाव निर्मल होते हैं। वे नग्न मे शरीर रक्षा के लिये जिससे धर्म साधन हो, आहार लेने आते है सो भी ३२ अन्तराय टालकर नवधा भक्ति से भोजन लेते है वरना जगलों में, नदियों के तटपर, पर्वतों की चोटियों पर ध्यानारूढ रहते है। वे महामुनि करुणा के सागर आप तिरने वाले दूसरों के तारने वाले होते है। उनके भाव सर्वोत्कृष्ट उच्च होते है जैसे कूप का जल एक काच के गिलास में भरकर देखिये तो गदलासा मालूम होगा, यही अवस्था ठीक हम संसारियों की है और कुछ देर ठहरें जब वह गिलास का जल बिलकुल स्वच्छ यानी कुल कर्दम नीचे बैठ जाता है और जल निर्मल होजाता है सो ठीक यही अवस्था महा मुनियों की है। ऐसे निर्ग्रंथ मुनि, सर्वोत्कृष्ट पूज्य हैं। नग्न अवस्था पर निम्न दृष्टान्त द्वारा विचार करिये।

एक समय सरमद नाम का मुसलमान फकीर देहली के गली कूचों में बरहना (नग्न) मादर जाद होकर घूम रहा था। औरंगजेब बादशाह ने देखा, तन पोशिश के लिए कपडे भेजे, फकीर मजजूब (अपनी ही आत्मा में लीन निजानन्द अवस्था में) और मस्त था। कह कहा (राग छिपाकर) हंसा! कलम दवात कागज पास था एक रुबाई [शेर (छन्द)] लिखी और बादशाह के खिलअत को यों ही वापिस कर दिया रुबाई यह थी!

आकम कि तुरा कुलाह सुल्तानी दाद ।
मारा हम और अस्बाब परेशानी दाद ॥
पोशानीद लिबास हरकारा ऐबे दीद ।
बे ऐबां रा लिबास अयानी दाद ॥

अर्थ—जिस ने तुमको बादशाही ताज दीया उसी ने हम को परेशानी का सामान दीया। जिस किसी में कोई एब पाया उस को लिबास पहिनाया और जिस में एब न पाए उनको नंगेपन का लिबास दिया।

यह लाख रुपये का कलाम है। हमको नगेपन पर घृणा या निंदा न करना चाहिए। ज्ञान और तप से उन की आत्मा और इंद्रियां निर्मल और दमन हो गई हैं हम को उनके उच्च आदर्श भावों पर विचार करना चाहिए। चूंकि हमारी आत्मा विकार सहित और कामातुर है इस लिए हम अज्ञानी, उनके शरीर को तरफ बुरी दृष्टी कर लेते हैं जैसे कहावत है कि चोर सबको चोर ही समझता है इत्यादि। सुनिए छोटे बालक लड़के लड़कियां नग्न वस्त्र एक जगह खेलते हैं परन्तु ज्यों २ संसारी कार्यों का उन पर असर पडता जाता है और कामातुर होने की अवस्था नजर आती है फौरन उनको कपडे पहना दिए जाते हैं। तरुण अवस्था में उन्हें एक जगह खेलने भी नहीं देते। जब संसारी कामों में लग कर, ज्ञान प्राप्त होता है तो संसार को हेच समझने लगते हैं और ज्ञान द्वारा संसारी विकारों को निकालते हुए गृहस्थ अवस्था को त्याग देते हैं यहां पूर्ण विचार करिए कि जब तक संसारी अवस्था का चक्र न पड़ा था तब तक नंगे रहे और जब चक्र पड गया तो कपड़े पहनने लगे। मगर जब संसारी चक्र निकल गया तो फिर कपड़े छोड़ दिए अब कौन सी बुराई की बात रही! यही ज्ञान की बात है हम विकारी कपडे पहिने हुए, इन्हीं नेत्रों से माता पिता भाई बहिन, स्त्री पति, पुत्र पुत्री, इत्यादि को देखते हैं मगर भावों का विचार रखते हैं। इस लिए यह बात सिद्ध हो गया कि हमको ऐसे देव गुरु का दर्शन सर्वोत्कृष्ट उच्च भावों से करना चाहिए और उनके चर्णों की पूजा कर मनुष्य जीवन सफल करना आवश्यक है। सिद्धान्त यह है कि आत्मा को शारीरिक बंधन से और तअल्लुकात व पोशिश से आज़ाद करके बिलकुल नग्न करदीया जाय ताकि इस का निज रूप नज़र में आवे, व ज़ाहिरदारी के रस्मोरिवाज से पर रहते हैं। देव की क्या बात है। वे इक्तदा पुन्डा (यानी निज आत्म में लीन) रहने वाले हैं। यदि हम अपना सा समझें तो क्या हमारी महाभूल नहो है? जैसा हम भाव व भृकुटी करेंगे वैसा ही हमारे लिए बंध है यानी दर्पण में जैसा मुख करो वैसा ही दीखता है। जिस नगर के किनारे ऐसे जैन मुनि पहुंच जाते हैं दुर्भिक्ष व मरी जाती रहती है उनके चर्णोदिक व चरण रज मस्तक पर चढ़ाने से शरीर निरोग और गुणों की खान हो जाता है। हमारा ऐसे जैन जती

को बारम्बार नमस्कार होवे। जहाँ २ ऐसे महान पुरुषों ने तप किया है वही स्थान जग में तीर्थ होगए हैं।

अङ्गरेजी में भी मसल इस प्रकार है :—

"LIVES OF GREAT MEN ALL REMIND US,
WE CAN MAKE OUR LIVES SUBLIME,
AND DEPARTING, LEAVE BEHIND US,
FOOT—PRINTS ON THE SANDS OF TIME

रेखता

चलो देखो दिगम्बर मुनि महानाकट ध्यानम में।
खड़े निश्चल हैं वे वन में तपस्या हो तो ऐसी हो॥
गर्मीषम काल कैसा है कुरंग वन में भय कायर।
शिखर पर हैं खड़े निर्भय तपस्या हो तो ऐसी हो॥
अरु पावस अती गरजे पड़ें हैं मेघ की धारा।
वृक्ष तल पद्म आसन हैं तपस्या हो तो ऐसी हो॥
यह देखो शीत की सरदी गले हैं मन भी नागर के।
लगा है ध्यान सरतापर तपस्या हो तो ऐसी हो॥
दहाड़ सिंह जिस वन में लगा ध्यान शासन में।
खड़ी है वालि जिन तन में तपस्या हो तो ऐसी हो॥
शुद्ध उपयोग हुताशन में कर्मको जारे निशदिन।
शत्रु और मित्र से समता तपस्या हो तो ऐसी हो॥
मुमुक्षु की है यही पहेचान बखानो जैन शासन में।
झुकाकर सिर करू सिजदा तपस्या हो तो ऐसी हो॥

अब कुछ अजैन विद्वानों की भी सम्मतियां यहां पर प्रकट करते हैं जिसको लाला केसरीमल, मोतीलाल रांका ब्यावर वाले ने फरवरी १०२३ में संग्रह कर ट्रेक्ट द्वारा इस प्रकार प्रकाश किया था।

जैन धर्म की प्राचीनता व उत्तमता के विषय में अजैन सुप्रसिद्ध विद्वानों की सम्मतियें ।

श्रीयुत महामहोपाध्याय डाक्टर सतीशचन्द्र विद्या भूषण एम० ए० पी० एच० डी० एफ० आई० आर० एस० सिद्धान्त महोदधि प्रिंसपिल संस्कृत कालिज कलकत्ता ।

आपने २६ दिसम्बर सन् १९१३ को काशी (बनारस) नगर में जैन धर्म के विषय व्याख्यान दिया उसका सार-रूप कुछ वाक्य उद्धृत करते हैं ।

जैन साधु——एक प्रशंसनीय जीवन व्यतीत करने के द्वारा पूर्ण रीति से व्रत, नियम और इन्द्रिय संयम का पालन करता हुआ जगत के सन्मुख आत्म संयम का एक बड़ा ही उत्तम आदर्श प्रस्तुत करता है। प्राकृत भाषा अपने सम्पूर्ण मधुमय सौन्दर्य को लिए हुए जैनियों की रचना में ही प्रगट की गई है ।

[२]

श्रीयुत महा महोपाध्याय सत्य सम्प्रदाया चार्य सर्वान्तर पंडित स्वामी राममिश्र जी शास्त्री भूत प्रोफेसर संस्कृत कालेज बनारस ।

आपने मि० पौष-शु० १ सं० १९६२ को काशीनगर में व्याख्यान दिया उस में के कुछ वाक्य उद्धृत करते हैं ॥

(१) ज्ञान, वैराग्य, शांति, क्षांति, अदम्भ अनीर्ष्या, अक्रोध अमात्सर्य, अलोलुपता, शम, दम, अहिंसा, समदृष्टि इत्यादि गुणों में एक एक गुण ऐसा है कि जहां वह पाया जाय वहां पर बुद्धिमान् पूजा करने लगते हैं। तब तो जहां ये (अर्थात् जैनों में) पूर्वोक्त सब गुण निरतिशय सीम होकर विराजमान हैं उनकी पूजा न करना अथवा ऐसे गुण पूजकों की पूजा में बाधा डालना क्या इन्सानियत का कार्य है ?

(२) मैं आपको कहाँ तक कहूँ बड़े बड़े नामी आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में जो जैन मत का खण्डन किया है वह ऐसा किया है जिसे सुन हँसी आती है।

(३) स्याद्वाद का यह (जैन धर्म) अभेद्य किला है उस के अन्दर वादी प्रतिवादियों के मायामय गोले नहीं प्रवेश कर सकते।

(४) सज्जनो! एक दिन वह था कि जैन सम्प्रदाय के आचार्यों के हुंकार से दसों दिशाएं गूंज उठती थीं।

(५) जैन मत तब से प्रचलित हुआ है जब से संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ।

(६) मुझे इस में किसी प्रकार का उज्र नहीं है कि जैन दर्शन वेदान्तादि दर्शनों से पूर्व का है।

[१]

भारत गौरव के तिलक पुरुष शिरोमणि इतिहासज्ञ, माननीय पं० बाल गंगाधर तिलक* के ३० नवम्बर सन् १९०४ को बड़ोदा नगर में दिये हुए व्याख्यान से उद्धृत कुछ वाक्य।

(१) श्रीमान् महाराज गायकवाड़ (बड़ोदा नरेश) ने पहले दिन कानफरेंस में जिस प्रकार कहा था उसी प्रकार 'अहिंसा परमोधर्म' इस उदार सिद्धान्त ने ब्राह्मण धर्म पर चिरस्मरणीय छाप मारी है। पूर्व काल में यज्ञ के लिए असंख्य पशु हिंसा होती थी इस के प्रमाण मेघदूत काव्य आदि अनेक ग्रन्थों से मिलते हैं——परन्तु इस घोर हिंसा का ब्राह्मण धर्म में से विदाई ले जाने का श्रेय (पुण्य) जैन धर्म के हिस्से में है।

(२) ब्राह्मण धर्म को जैन धर्म ही ने अहिंसा धर्म बनाया।

(३) ब्राह्मण व हिन्दू धर्म में जैन धर्म के ही प्रताप से मांस भक्षण व मदिरा पान बन्द हो गया।

---

*भूतपूर्व सम्पादक केसरी।

(४) ब्राह्मण धर्म पर जो जैन धर्म ने अक्षुण्ण छाप मारी है उस का यश जैन धर्म ही के योग्य है। जैन धर्म में अहिंसा का सिद्धांत प्रारम्भ से है, और इस तत्व का समझने की त्रुटि के कारण बौद्ध धर्म अपने अनुयायी चीनियों के रूप में सर्व भक्षी हो गया है।

(५) पूर्व काल में अनेक ब्राह्मण जैन पण्डित जैन धर्म के धुरंधर विद्वान हो गए हैं।

(६) ब्राह्मण धर्म जैन धर्म से मिलता हुआ है इस कारण टीक रहा है। बौद्ध धर्म जैन धर्म से विशेष अमिल होने के कारण हिंदुस्तान से नाम शेष हो गया।

(७) जैन धर्म तथा ब्राह्मण धर्म का पीछे से इतना निकट सँबंध हुआ है कि ज्योतिष शास्त्री भास्कराचार्य ने अपने ग्रन्थ में ज्ञान दर्शन और चारित्र (जैन शास्त्र विहित रत्नत्रय धर्म) को धर्म के तत्व बतलाए हैं।

केसरी पत्र १३ दिसम्बर सन १९०४ में भी आप ने जैन धर्म के विषय में यह सम्मति दी है।

ग्रन्था तथा सामाजिक व्याख्यानों से जाना जाता है कि जैन धर्म अनादि है यह विषय निर्विवाद तथा मत भेद रहित है। सुतरां इस विषय में इतिहास के दृढ़ सबूत हैं और निदान ईस्वी सन से ५२६ वर्ष पहले का तो जैन धर्म सिद्ध है ही। महावीर स्वामी जैन धर्म को पुनः प्रकाश में लाए इस बात को आज २४०० वर्ष व्यतीत हो चुके हैं बौद्ध धर्म की स्थापना के पहले जैन धर्म फैल रहा था यह बात विश्वास करने योग्य है। चौबीस तीर्थंकरों में महावीर स्वामी अंतिम तीर्थंकर थे, इस से भी जैन धर्म की प्राचीनता जानी जाती है। बौद्ध धर्म पीछे से हुआ यह बात निश्चित है।

[४]

पेरिस (फ्रांस की राजधानी) के डाक्टर ए० गिरनाट अपने पत्र ता० ३–१२–१९११ म लिखा है कि

मनुष्यों की तरक्की के लिए जैन धर्म का चारित्र बहुत लाभकारी है यह धर्म बहुत ही असली, स्वतन्त्र सादा बहुत मूल्य वान तथा ब्राह्मणों के मतों से भिन्न है तथा यह बौद्ध के समान नास्तिक नहीं है।

[५]

जर्मनी के डाक्टर जाहनस हर्टेल ता० १७–६–१९०८ के पत्र में कहते हैं कि

मैं अपने देश वासियों को दिखाऊंगा कि कैसे उत्तम नियम और ऊंचे विचार जैन धर्म और जैन आचार्यों में हैं। जैन का साहित्य, बौद्धों से बहुत बढ़कर है और ज्यों २ मैं जैन धर्म और उसके साहित्य समझता हूं त्यों २ मैं उनको अधिक पसन्द करता हूं।

[६]

अन्यमतधारी मिस्टर कन्नुलाल जोधपुर की सम्मति— (देखो The Theosophist माह दिसंबर सन १९०४ व जनवरी सन १९०५)

जैन धर्म एक ऐसा प्राचीन धर्म है कि जिसकी उत्पत्ति तथा इतिहास का पता लगाना एक बहुत ही दुर्लभ बात है। इत्यादि

[७]

मि० आबे जे० ए० डवाई की सम्मति —

(Discription of the character manners and customs of the people of India and of their institution and civil)

इस नाम की पुस्तक में जो सन १८१७ में लंडन में छपी है बहुत बड़े व्याख्यान में जैन धर्म को बहुत प्राचीन लिखा

है। इस में जैनियों के चार वेद प्रथमानुयोग चरणानुयोग, करणानुयोग, और द्रव्यानुयोग, को आदिश्वर भगवान ने रचा ऐसा कहा है और आदिश्वर को जैनियों में बहुत प्राचीन और प्रसिद्ध पुरुष जैनियों के २४ तीर्थंकरों में सब से पहले हुए हैं ऐसा कहा है।

(८)

श्रीयुत वरदाकान्त मुख्योपाध्याय एम० ए० बंगला श्रीयुत साधूराम प्रेमी द्वारा अनुवादित हिन्दी लेख से उद्धृत कुछ वाक्य।

(१) जैन निरामिष भोजी (मांस त्यागी) क्षत्रियों का धर्म है।

(२) जैन धर्म हिन्दु धर्म से सर्वथा स्वतन्त्र है उसकी शाखा या रूपान्तर नहीं है। मेक्समुलर का भी यह ही मत है।

(३) पार्श्वनाथ जी जैन धर्म के आदि प्रचारक नहीं थे परन्तु इसका प्रथम प्रचार रिषभदेवजी ने किया था इसकी पुष्टी के प्रमाणों का अभाव नहीं है।

(४) बौद्ध लोग महावीर जी को निर्ग्रन्थों अर्थात जैनियों का नायक मात्र कहते हैं व्यापक नहीं कहते। जर्मन डाक्टर जेकोबी का भी यह ही मत है।

(५) जैन धर्म ज्ञान और भावको लिये हुए है और मोक्ष भी इसी पर निर्भर है।

(९)

रारा वासुदेव गोविंद आपटे बी० ए० इन्दौर निवासी के व्याख्यान से कुछ वाक्य उद्धृत।

(१) प्राचीन काल में जैनियों ने उत्कृष्ट पराक्रम का राज्य* भार का परिचालन किया है।

(२) जैन धर्ममें अहिंसा का तत्व अत्यन्त श्रेष्ठ है (३) जैनधर्म

---

* आदिश्वर को जैनी रिषभदेवजी कहते हैं।

* प्राचीन काल में चक्रवर्ती, महा मण्डलीक, मण्डलीक आदि बड़े २ पदाधिकारी जैनधर्मी हुए हैं जैनियों के परम पूज्य २४ सौ तीर्थंकर भी सूर्यवंशी चन्द्रवंशी आदि क्षत्रिय कुलोत्पन्न बड़े २ राज्याधिकारी हुए जिसकी साक्षी जैन ग्रन्थों तथा किसी २ अजैन शास्त्रों व इतिहास ग्रन्थों में भी मिलती है।

में यति धर्म अत्यंत उत्कृष्ट है इस में संदेह नहीं (४) जैनियों में स्त्रियों को भी यति दिक्षा लेकर परोपकारी कृत्यों में जन्म व्यतीत करने की आज्ञा है यह सर्वोत्कृष्ट है (६) हमारे हाथ से जीव हिंसा न होने पावे इसके लिए जैनी जितने डरते हैं उतने बौद्ध नहीं डरते। बौद्ध धर्म देशों में मांसाहार अधिकता से जारी है आप स्वत हिंसा न करके दूसरे के द्वारा मारे हुए बकरे आदि का मांस खाने में कुछ हर्ज नहीं ऐसे सुभीते का अहिंसा तत्व जो बौद्धों ने निकाला था वह जैनियों को स्वीकार नहीं है। (७) जैनियों की एक समय हिंदुस्तान में बहुत उन्नतावस्था थी। धर्म, नीति, राज्य कार्य धुरंधरता शास्त्रदान समाजोन्नति आदि बातों में उनका समाज इतर जनों से बहुत आगे था।

संसार में अब क्या हो रहा है इस ओर हमारे जैन बंधु लक्ष देकर चलगे तो यह महापद पुन प्राप्त कर लेने में उन्हें अधिक श्रम नहीं पड़गा।

[१०]

सुप्रसिद्ध संस्कृतज्ञ प्रोफेसर डा० हर्मन जेकोबी एम० ए० पी० एच० डी० बोन जर्मनी।

जैन धर्म सर्वथा स्वतंत्र धर्म है मेरा विश्वास है कि यह किसी का अनुकरण नहीं है और इसी लिए प्राचीन भारतवर्ष के तत्वज्ञान का और धर्म पद्धति का अध्ययन करने वालों के लिए यह बड़े महत्व की वस्तु है।

[११]

पूर्व खानदेश के कलक्टर साहिब श्रीयुत आटोराव फिलड साहिब ७ दिसम्बर सन १९१९ को पाचोरा में श्रीयुत वछराज जी रूपचन्द जी की तरफ एक पाठशाला खोलने के समय आपने अपने व्याख्यान में कहा कि—

जैन जाति दया के लिए खास प्रसिद्ध है, और दया के लिए हजारों रुपया खर्च करते हैं। जैनी पहले क्षत्री थे, यह उनके चहरे व नाम से भी जाना जाता है। जैनी अधिक शांति प्रिय हैं। (जैन हितेच्छु पुस्तक १६ अंक ११ में से)

[१२]

मुहम्मद हाफ़िज सय्यद बी० ए० एल टी थियोसोफिकल हाई स्कूल कानपुर लिखते हैं।

"मैं जैन सिद्धांत के सूक्ष्म तत्वों से गहरा प्रेम करता हूं।

[१३]

रायबहादुर पूर्नेन्दु नारायण सिंह एम ए० बाकीपुर लिखते है—

"जैन धर्म पढ़ने की मेरी हार्दिक इच्छा है, क्योंकि मैं ख्याल करता हूं कि व्यवहारिक योगाभ्यास के लिए यह साहित्य सब से प्राचीन (Oldest) है यह वेद की रीति रिवाजों से पृथक है इस में हिंदू धर्म से पूर्व की आत्मिक स्वतंत्रा विद्यमान है, जिसको परम पुरुषों ने अनुभव व प्रकाश किया है यह समय है कि हम इसके विषय में अधिक जानें।

[१४]

महा महोपाध्याय पं० गंगानाथ झा एम० ए० डी० एल० एल इलाहाबाद—

"जब से मैंने शंकराचार्य द्वारा जैन सिद्धांत पर खंडन को पढ़ा है, तब से मुझे विश्वास हुआ कि इस सिद्धांत में बहुत कुछ है जिसको वेदांत के आचार्य ने नहीं समझा, और जो कुछ अब तक मैं जैन धर्म को जान सका हूं उस से मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि यदि वह जैन धर्म को, उसके असली ग्रंथों से देखने का कष्ट उठाता तो उनको जैन धर्म से विरोध करने की कोई बात नहीं मिलती।

[१५]

नैपालचन्द्र राय अधिष्ठाता ब्रह्मचर्याश्रम शांतिनिकेतन बोलपुर—मुझको जैन तीर्थंकरों की शिक्षा पर अतिशय भक्ति है।

में यति धर्म श्रावक उत्कृष्ट है इस में संदेह नहीं (५) जैनियों में स्त्रियों को भी यति दिक्षा लेकर परोपकारी कृत्यों में जन्म व्यतीत करने की आज्ञा है यह सर्वोत्कृष्ट है (६) हमारे हाथ से जीव हिंसा न होने पावे इसके लिए जैनी जितने डरते हैं उतने बौद्ध नहीं डरते। बौद्ध धर्म देशों में मांसाहार अधिकता से आता है आप स्वतः हिंसा न करके दूसरे के द्वारा मारे हुए बकरे आदि का मांस खाने में कुछ हर्ज नहीं ऐसे सुभीते का अहिंसा तत्व जो बौद्धों ने निकाला था वह जैनियों को स्वीकार नहीं है। (७) जैनियों की एक समय हिंदुस्तान में बहुत उन्नतावस्था थी। धर्म, नीति, राजकार्य धुरंधरता शास्त्रदान समाजोन्नति आदि बातों में उनका समाज इतर जनों से बहुत आगे था।

संसार में अब क्या हो रहा है इस ओर हमारे जैन बंधु लक्ष देकर चलेंगे तो यह महापद पुनः प्राप्त कर लेने में उन्हें अधिक श्रम नहीं पड़ेगा।

[१०]

सुप्रसिद्ध संस्कृतज्ञ प्रोफेसर डा० हर्मन जेकोबी एम० ए० पी० एच० डी० बोन जर्मनी।

जैन धर्म सर्वथा स्वतंत्र धर्म है मेरा विश्वास है कि यह किसी का अनुकरण नहीं है और इसी लिए प्राचीन भारतवर्ष के तत्वज्ञान का और धर्म पद्धति का अध्ययन करने वालों के लिए यह बड़े महत्व की वस्तु है।

[११]

पूर्व खानदेश के कलक्टर साहिब श्रीयुत आटोरीय फि- साहिब ७ दिसम्बर सन १९१४ को पाचोरा में श्रीयुत बच्छरा जी रूपचन्द जी की तरफ़ एक पाठशाला खोलने के स- आपने अपने व्याख्यान में कहा कि—

जैन जाति दया के लिए खास प्रसिद्ध है, और द- लिए हजारों रुपया खर्च करते हैं। जैनी पहले क्षत्री यह उनके चहरे व नाम से भी जाना जाता है। जैनी शांति प्रिय हैं। (जैन हितेच्छु पुस्तक १६ अङ्क ११ में से)

दिल विशाल था, यह एक बेपायाकनार समंदर था जिस में मनुष्य प्रेम की लहरें जोर शोर से उठती रहती थी और सिर्फ मनुष्य ही क्यों, उन्होंने संसार के प्राणीमात्र की भलाई के लिए सब का त्याग किया जानदारों का खून बहाना रोकने के लिए अपनी जिंदगी का खून कर दिया। यह अहिंसा की परम ज्योति वाली मूर्तियां हैं। वेदों की श्रुति "अहिंसा परमो धर्म" कुछ इन्हीं पवित्र महान पुरुषों के जीवन में अमली सूरत इख्तियार करती हुई नजर आती है।

ये दुनियां के जबरदस्त रिफार्मर, जबरदस्त उपकारी और बड़े ऊंचे दर्जे के उपदेशक और प्रचारक गुजरे हैं। यह हमारी कौमी तवारीख (इतिहास) के कीमती (बहुमूल्य) रत्न हैं। तुम कहां और किन में धर्मात्मा प्राणियों की खोज करते हो इन्हीं को देखो इन से बेहतर (उत्तम) साहबे कमाल तुम को और कहां मिलेंगे। इन में त्याग था, इन में वैराग्य था, इन में धर्म का कमाल था यह इंसानी कमजोरियों से बहुत ही ऊंचे थे। इनका खिताब "जिन" है जिन्हों ने मोह माया को और मन और काया को जीत लिया था। यह तीर्थंकर हैं। इन में बनावट नहीं थी, दिखावट नहीं थी, जो बात थी साफ साफ थी। ये बड़े लासानी (अनोपम) शख्सीयतें हो गुजरी हैं जिनको जिस्मानी कमजोरियों व ऐबों के ढिपाने के लिये किसी जाहिरी पोशाक की जरूरत लाहक नहीं हुई। क्यों कि उन्होंने तप करके, जप करके योग का साधन करके अपने आपको मुकम्मल और पूर्ण बना लिया था इत्यादि इत्यादि

(१७)

श्रीयुत तुकाराम कृष्ण शर्मा लट्टू बी० ए० पी एच० डी० एम० आर० ए० एस० एम० ए० एस० बी०एम० जी०ओ० एस० प्रोफेसर संस्कृत शिलालेखादि के विषय के-अध्यापक क्विन्स कालिज बनारस।

स्याद्वाद महा विद्यालय काशी के दशम वार्षिकोत्सव पर दिये हुए व्याख्यान में से कुछ वाक्य उद्धृत।

(१) भगवान पहले इस भारत वर्ष में "दिगम्बरीय" मार्ग के [illegible] [illegible] हुए, ये दयावान अद्भुपरिग्रामी, पहिले तीर्थंकर हुए [illegible] मिथ्यात्व अवस्था को देखकर "सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र रूपी मोक्ष शास्त्र का उपदेश किया । बस यह ही [illegible] इस कल्प में हुआ । इसके पश्चात अजीतनाथ से लेकर महावीर तक तीन तीर्थंकर अपने २ समय में अज्ञानी जीवों का [illegible] प्रचार नाश करते रहे ।

(१८)

साहित्य रत्न डाक्टर रवीन्द्रनाथ टागोर कहते हैं कि—

महावीर ने डौंडीम नाद से हिंद में ऐसा संदेश फैलाया कि :——धर्म यह मात्र सामाजिक रूढि नहीं है परन्तु वास्तविक सत्य है । मोक्ष यह बाहरी क्रिया कांड पालन से नहीं मिलता परन्तु सत्य धर्म स्वरूप में आश्रय लेने से ही मिलता है । और धर्म और मनुष्य में कोई स्थाई भेद नहीं रह सकता । कहते आश्चर्य पैदा होता है कि इस शिक्षा ने समाज के हृदय में जड़ करके बैठी हुई भावना रूपी विघ्नों को त्वरा से भेद दिए और देश को वशीभूत कर लिया इसके पश्चात् बहुत समय तक इन क्षत्रिय उपदेशकों के प्रभाव बल से ब्राह्मणों की सत्ता अभिभूत होगई थी ।

(१९)

टी पी कुप्पुस्वामी शास्त्री एम ए आसिसटेन्ट गवर्नमेन्ट म्यूजियम तंजौर के एक अंग्रेजी लेख का अनुवाद "जैन, हितैषी भाग १० अंक २ में छपा है उस में आपने बतलाया है कि—

(१) तीर्थंकर जिनसे जैनियों के विख्यात सिद्धांतों का प्रचार हुआ है आर्य क्षत्रिय थे (२) जैनी अवैदिक भारतीय आर्यों का एक विभाग है ।

(२०)

श्री स्वामी विरुपाक्ष वाडियर "धर्म भूषण" "पण्डित वेद तीर्थ" "विद्या[illegible] [illegible] ए [illegible] है [illegible] कालेज इन्दौर

स्टेट' आपका 'जैन धर्म मीमासा'' नाम का लेख चित्र मय जगत में छपा है उसे 'जैन पथ प्रदर्शक' आगरा ने दीपावली क अंक में उद्धृत किया है उस के कुछ वाक्य उद्धृत'—

(१) ईर्षा द्वेष के कारण धर्म प्रचार को रोकने वाली विपत्ति के रहते हुए जैन शासन कभी पराजित न हो कर सर्वत्र विजयी ही होता रहा है। इस प्रकार जिस का वर्णन है यह 'अर्हन्देव' साक्षात परमेश्वर (विष्णु) स्वरूप है इसके प्रमाण भी आर्ष ग्रंथों में पाये जाते हैं।

(२) उपरोक्त अर्हन्त परमेश्वर का वर्णन वेदों में भी पाया जाता है।

(३) एक बंगाली बैरिष्टर ने 'प्रेक्टिकल पाथ' नामक ग्रंथ बनाया है। उस में एक स्थान पर लिखा है कि रिषभदेव का नाती मरीचि प्रकृति वादि था, और वेद उसके तत्वानुसार होने के कारण ही ऋगवेद आदि ग्रंथों की उत्पति उसी के ज्ञानद्वारा हुई है फलत मरीचि रिषी के स्त्रोत, वेद पुराण आदि ग्रंथों में है यदि स्थान स्थान पर जैन तीर्थंकरो का उल्लेख पाया जाता है तो कोई कारण नही कि हम वैदिक काल में जैन धर्म का अस्तित्व न मानें।

(४) मतलब यह है कि इन सब प्रमाणो से जैन धर्म का उल्लेख हिंदुओं के पूज्य वेद में भी मिलता है।

(५) इस प्रकार वेदो में जैन धर्म का अस्तित्व सिद्ध करने वाले बहुत से मंत्र हैं। वेद के सिवाय अन्य ग्रंथो में भी जैन धर्म के प्रति सहानुभूति प्रगट करने वाले उल्लेख पाये जाते हैं। स्वामी जी ने इस लेख में वेद, शिव पुराणादि के कई स्थानों के मूल श्लोक दे कर उस पर व्याख्या भी की है।

(६) पीछे से जब ब्राह्मण लोगों ने यज्ञ आदि में पशुबलिदान, कर 'मा हिंसात सर्व भूतानि' वाले वेद वाक्य पर हरताल

फेर दो उस समय ऋषियों ने उन दिगम्बर यति आदि का उल्लेख करना आरम्भ किया था उस समय से ब्राह्मणों के दिल में जैनों के प्रति द्वेष बढ़ने लगा परन्तु किसी भागवतादि महा पुराणों में ऋषभदेव के विषय में गौरव युक्त उल्लेख मिल रहा है।

(२१)

श्रीयुत जाश सरकार एम० ए० बी० एल० लिखित 'जैन दर्शन जैन धर्म' के जैन हितैषी भाग १२ अङ्क ९-१० में छपा है उस में के कुछ वाक्य।

(१) यह अच्छी तरह प्रमाणित हो चुका है कि जैन धर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है (महावीर स्वामी जैन धर्म के स्थापक नहीं हैं उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है

(२) जैन दर्शन में आत्म तत्व की जैसी विस्तृत आलोचना है और वैसी किसी भी दर्शन में नहीं है।

आवश्यक १० बोल ।

(१) जैन धर्म आत्मा का निज स्वभाव है और एक मात्र उसी के द्वारा सुख सम्पादन किया जा सक्ता है।

(२) सुख मोक्ष में ही है जिसको कि प्राप्त कर के यह अनादि कर्म मल से संसार चतुर्गति में परिभ्रमण करने वाला अशुद्ध और दुखी आत्मा निज परमात्म स्वरूप को प्राप्त कर सदैव आनन्द में मग्न रहा करता है।

(३) स्मरण रक्खो कि मोक्ष मांगने और किसी के देने से नहीं मिलती। उसकी प्राप्ति हमारी पूर्ण वीतरागता और पुरुषार्थ से कर्म मल और उनके कारण नष्ट करने पर ही अवलम्बित है।

(४) स्याद्वाद सत्यता का स्वरूप है और वस्तु के अनन्त धर्मों का यथार्थ कथन कर सक्ता है।

(५) जैन धर्म ही परमात्मा का उपदेश है क्यों कि वही पूर्ण पर विरोध और पक्षपात रहित सब जीवों को उनके कल्याण का उपदेश देता है और उसी से परमात्मा की सिद्धि और छाप इस संसार में है।

(६) एक मात्र 'ही' और 'भी' ही अन्य धर्म और जैन धर्म का भेद है। यदि उन सब के भाव और उपदेश की इयत्ता की 'ही' 'भी' में बदल दी जाय तो उन्हीं सबका समुदाय जैन धर्म है।

(७) मत समझो कि जैन धर्म किसी समुदाय विशेष का ही धर्म है या हो सक्ता है। मनुष्यों की तो कहै कौन जीवमात्र इस को स्वशक्त्यानुसार धारण कर तद्रूप निज कल्याण कर सकता है।

(८) जैनधर्म के समस्त तत्व और उपदेश वस्तु स्वरूप, प्राकृतिक नियम, न्यायशास्त्र शक्यानुष्ठान और विकाश सिद्धान्त के अनुसार होने के कारण सत्य है।

(९) सर्वज्ञ वीतराग और हितोपदेशक देव, निर्ग्रन्थ गुरु और अहिंसा मूलक शास्त्र ही जीव को यथार्थ उपदेश दे सकते हैं और उन सबके रखने का सौभाग्य एक मात्र जैन धर्म को ही प्राप्त है।

(१०) समस्त दुःखों से उद्धार करने वाली जैनेन्द्री दीक्षा ही है। यदि उसकी शक्ति न हो तो भी वैसा लक्ष्य रख अन्याय और अभक्ष्य का त्याग करके गृहस्थ मार्ग द्वारा क्रमशः स्वपर कल्याण करते रहना चाहिये।

॥ समाप्त ॥

श्री दिगम्बर जैन धर्म प्रकाशक मंडल देहली ने अजैन विद्वानों की सम्मति संग्रह कर "जैन धर्म का महत्व नामा ट्रेक्ट ता० २८ जनवरी १९२१ को इस प्रकार प्रकाश किया था।

जैनधर्म का महत्व

(१) सुप्रसिद्ध श्रीयुत महात्मा शिवव्रतलालजी वर्मन M, A, "साधु" "सरस्वती भण्डार" "तत्वदर्शी" मार्तण्ड "लक्ष्मीभण्डार" "सन्त" "सन्देश" आदि उर्दू तथा नागरी मासिक पत्रों के सम्पादक "विचार कल्पद्रुम" "विवेक कल्पद्रुम" "वेदान्त कल्पद्रुम" आदि के रचयिता १८पुराणादि अनेक ग्रन्थों के अनुवादक

इन महात्मा महानुभाव द्वारा सम्पादित "साधु" नामक उर्दू मासिकपत्र जनवरी सन १९११ के अङ्क में प्रकाशित "महावीर स्वामी का पवित्र जीवन" नामक लेख का सारांश (जो न केवल श्रीमहावीर स्वामी के सम्बन्ध में किंतु ऐसे सर्व जैन तीर्थंकरों, व जैन मुनियों के सम्बन्ध में समझना)।

हिन्दुओं में ऐसे लोग कम नजर आवेंगे जो महावीर स्वामी के पाक और मुकद्दस नाम से वाकिफ होंगे। वे जैनियों के आचार्य गुरु थे। पाक दिल, पाक ख्याल, मुजस्सिम पाकी व पाकीजगी थे।

हिन्दुओ! अपने बुजुर्गों की इज्जत करना सीखो, मजहबी इख्तलाफात की वजह से उनकी शान में भूलकर भी कलमे नाशायस्ता इस्तैमाल न करो। जैनी हम से जुदा नहीं हैं। उन

नादानों की बातों को न सुनो, जो गलती से, गुमराही से, नादानी और तास्सुब से कहते हैं कि "हाथी के पाँव के तले दब जाओ, मगर जैन मन्दिर में घुसकर अपनी हिफाजत न करो।" इस तास्सुब का कहीं ठिकाना है ? इस तरह किसी का कोई हद भी है ? आखिर इन से तास्सुब क्यों किया जाय ? क्या हुआ अगर इनका किसी ख्याल तुमको मुवाफ़कत नहीं है ? न सही, कौन सब बातों में सब से मिलता है ? तुम उन के गुणों का ख्याल करो, उनकी पाकीज़ह सूरतों का दर्शन करो, उनकी माया को प्यार की निगाह से नज़्ज़ारह देखो ये धर्म कर्म की झलकती हुई नूरानी मूर्ते हैं। किसी के कहने सुनने पर न जाओ। जो जैसा हो उसको वैसा ही देखो। यह अहिंसा की परम ज्योतिवाली मूर्तियाँ हैं, वेदों की श्रुति 'अहिंसा परमो धर्मः' कुछ इन्हीं पाक बुजुर्गों की जिन्दगी में अमली सूरत अख्तियार करती हुई नज़र आती है। ये दुनियाँ के जबरदस्त रिफार्मर जबरदस्त मोहसिन और बड़े ऊँच दर्जे के वाइज़ और प्रचारक गुज़रे हैं, यह हमारी कौमी तवारीख के कीमती रत्न हैं। तुम कहाँ और किन में धर्मात्मा प्राणियों की तलाश करते हो ? इन को देखो, इन से बेहतर साहब कमाल तुमको कहाँ मिलेंगे ? इन में त्याग था, इन में वैराग्य था, इन में धर्म का कमाल था, ये इंसानी कमज़ोरी से बहुत ऊँचे थे, इनका खिताब 'जिन' है, जिन्होंने मोह माया को और मन और काया को जीत लिया था। ये तीर्थंकर हैं, ये परमहंस हैं, इनमें बनावट नहीं थी, बनावट नहीं थी, जो बात थी साफ साफ थी। तुम कहते हो कि ये नग्न रहते थे, इस में ऐब क्या है ? परम शुद्ध निर्विष, परम ज्ञानी कुदरत के सच्चे पुत्र, इनको पोशिश की ज़रूरत कब थी ?

सुनो एक मरतबह मुसलमानों का सरमस्त नामी फकीर देहली के गली कूचों में रहता मादरज़ात होकर घूम रहा था औरङ्गजेब बादशाह ने देखा, तब पोशिश के लिये कपड़े भेजे फकीर मजज़ूब ... था, कह कहा मारकर हंसा

कलम दावात कागज पास था, एक रुबाई लिखी और बादशाह के खिलअत को या हीं वापस कर दिया । रुबाई यह थी ?

ऑंकस कि तुरा कुलाह सुल्तानी दाद
मारा हम ओ अस्बाब परेशानी दाद ॥
पोशानीद लवास हर किरा ऐबे दीद ।
बे ऐबेग लिबयास उर्यानी दाद ॥

भावार्थ, जिसने तुमको बादशाही ताज दिया उसी ने हमको परेशानी का सामान दिया जिस किसी में कोई ऐब पाया उस को लिबास पहनाया और जिनमें ऐब न पाए उमको नगेपन का लिबास दिया

ये लाख रुपये का कलाम है और वह इन जैसी महात्माओं की पाक जिंदगी के हालात हैं । फकीरों की उरयानी देखकर तुम क्यों नाक भौं सकोड़ते हो ? उनके भावों को क्यों नहीं देखते ? सिद्धांत यह है कि आत्म को शारीरिक बंधन से और तालुकात के पोशिश से आजाद करके बिलकुल नंगा कर लिया जाय ताकि इसका निज रूप देखने में आवे । वे आत्मज्ञानी थे आत्मा का साक्षात्कार कर चुके थे । यह ऐबकी बात क्या है ? तुम्हारे लिए ऐब हो, बस इतनी ही बातपर तुम नफरत करते हो और हकीकत को नहीं समझते तुमको क्या कहा जाय तुम ईश्वर कुटी में रहने वालों को अपने ऐसा आदमी समझते हो यह तुम्हारी गलती है या नहीं ?

Other writers possessing more information than I do, will hereafter instruct us more fully concerning this interesting sect of Hindus and particularly respecting their religious worship, which probably at one time was that of all Asia from Sibiria to Cap Comorin, north to south, and from the caspian to the gulf of Kamaschatka, fromwest to East, &c —

अर्थ—मैंने इस में एक (Appendix) लगाया है, जिस में मैंने जैनियों और उन के मन्तव्य, उन के धर्म की बडी २ बातें और विशेष रीति रिवाजों का वर्णन किया है। मुझ से अधिक ज्ञान वाले अन्य लेखक महाशय हिंदुओं की इस लाभदायक जाति और विशेष उनकी धर्म सबंधी पूजा के हाल से हमको आइंदा अधिक परिचित करेंगे। यह पूजा किसी समय में अवश्य सारे एशिया (Asia) में अर्थात उत्तर में साईबिरिया (Sibiria)से दक्षिण रास कुमारी (Cape Comorin) तक और पश्चिम में कैस्पियन झील (Lake Caspian) से लेकर पूर्व में कमस्कटका की खाडी (Gulf of Kamaschatka) तक फैली हुई थी, इत्यादि। क्या इस से अधिक स्पष्ट और विश्वास योग्य अन्य कोई साक्षी हो सकती है ?

(९) बाबू प्यारेलाल जी साहब जिमींदार, बरोठा। जिन्होंने अनेक उपयोगी पुस्तकें लिखी हैं उन्होंने "हिंदुस्तान कदीम" नाम की उर्दू की पुस्तक लिखी है जिस में आपने जैन धर्म युरोप (EUROPE) में भी फैला हुआ था आदि [illegible] लेख लिखे हैं पर कथन बढने के भय से यहां सिर्फ [illegible]का (Africa) में भी जैन धर्म फैला हुआ था इस [illegible] संक्षेप लेख लिखा जाता है उसके पृ०, ९२ पर इस [illegible] है—

[illegible] प्रकार बयान में हमने साबित किया कि, हिंदु-[illegible] समाचक (हमनाम) शहर और पर्वत विद्यमान हैं

काश और क्रम को धारण किया न्याय दर्शन जिसे गौतम आदि गौतम ने बनाया है अध्यात्म विद्या के रूप में असम्भव हो जाता। यदि जैन और बौद्ध अनुमान चौथी शताब्दि में न्याय का यथार्थ और सत्याकृति में अध्ययन न करते, जिस समय, मैं जैनियों के न्यायावतार, परीक्षा मुख, न्यायदीपिका, आदि कुछ न्याय ग्रंथों का सम्पादन और अनुवाद कर रहा था उस समय जैनियों की विचार पद्धति यथार्थता, सूक्ष्मता, सुनिश्चितता, और सक्षिप्तता, को देखकर मुझे आश्चर्य हुआ था और मैंने धन्यवाद सहित इस बात को धारण (नोट) किया है कि किस प्रकार से प्राचीन न्याय-पद्धति ने जैन नैयायिकों के द्वारा क्रमश उन्नति लाभ कर वर्तमान रूप धारण किया है, इत्यादि।

(३) फादर अबे० जे० ए० डुबाई साहब मैसूर देश में प्रसिद्ध पादरी थे आपने फारसी भाषा में भारत के लोगोंका हाल लिखाहै "लार्ड विलयम बेंटिङ्क (Lord william Bentinck) जो हिन्दुस्तान के गवर्नर जनरल (Governor General) रह चुके हैं उन्होंने भी उस पुस्तक की बहुत प्रशंसा लिखी है इस पुस्तक की भूमिका के अन्त में सम्पादक ने इस प्रकार लिखा है —

Fr Abbe J A Dubois, Christian missionary states in the "Description of he Character, manners and customs, of the people of India and of their institution, religious and civil" as following —

"I have subjoined to the whole an appendix containing a brief account of the Jains, of their doctrines the principal points of their religion and their peculiar customs

Other writers possessing more information than I do, will hereafter instruct us more fully concerning this interesting sect of Hindus and particularly respecting their religious worship, which probably at one time was that of all Asia from Sibiria to Cap Comorin, north to south, and from the caspian to the gulf of Kamaschatka, fromwest to East, &c —

अर्थ—मैंने अंत में एक (Appendix) लगाया है, जिस में मैंने जैनियों और उन के मन्तव्य, उन के धर्म की बडी २ बातें और विशेष रीति रिवाजों का वर्णन किया है। मुझ से अधिक ज्ञान वाले अन्य लेखक महाशय हिंदुओं की इस लाभदायक जाति और विशेष उनकी धर्म संबधी पूजा के हाल से हमको आह्दा अधिक परिचित करेंगे। यह पूजा किसी समय में अवश्य सारे एशिया (Asia) में अर्थात उत्तर में साईबिरिया (Sibiria)से दक्षिण रास कुमारी (Cape Comorin) तक और पश्चिम में कैस्पियन झील (Lake Caspian) से लेकर पूर्व में कमस्कटका की खाडी (Gulf of Kamaschatka) तक फेली हुई थी, इत्यादि। क्या इस से अधिक स्पष्ट और विश्वास योग्य, अन्य कोई साक्षी हो सकती है ?

(६) बाबू प्यारेलाल जी साहब जिमींदार, बरोठा। जिन्होंने अनेक उपयोगी पुस्तकें लिखी है उन्होंने "हिंदुस्तान कदीम" नाम की उर्दू की पुस्तक लिखी है जिस में आपने जैन धर्म युरोप (EUROPE) में भी फैला हुआ था आदि अनेक लेख लिखे है पर कथन बढने के भय से यहा सिर्फ 'अफ्रीका' (Africa) में भी जैन धर्म फैला हुआ था इस विषय में संक्षप लेख लिखा जाता है उसके पृ०, ६२ पर इस प्रकार लिखा है —

"जिस प्रकार युरोप में हमने साबित किया कि, हिंदुस्तान के समानवाचक (हमनाम) शहर और पर्वत विद्यमान् हैं

इसी प्रकार मिश्र देश में आने जाने वाले भाई भी अपने प्यारे वतन (जन्म भूमि) को नहीं भूले। उन्होंने भी वहां एक पर्वत का नाम Meroe (सुमेरु) रक्खा। दूसरे पर्वत का नाम (Aeli (कैलाश) रक्खा। एक झील का नाम वहां (Menza Lake) (मनसा) मौजूद है। एक शहर का नाम भी On ग्राम है। एक सूबा (Gurna) गिरनार है जिस में मन्दिर और मूर्तियाँ गिरनार जैसी आज तक मिलती हैं जो अवश्य वहां के ही लोगों ने बसाया होगा" इत्यादि।

ऊपर जिस गिरनार का वर्णन आया है वह जैनियों का प्रसिद्ध तीर्थ जूनागढ़ के पास काठीयावाड़ में है जहां से २२ वें तीर्थंकर श्रीनेमिनाथ स्वामी मोक्ष को पधारे हैं।

आगे चलकर इसी पुस्तक के पृष्ठ ४३ पर इस प्रकार लिखा है —

"कुछ शहरों पर ही मौकूफ नहीं। मिश्र के बहुत से राजाओं के खालिस नाम संस्कृत भाषा के हैं, जैसे (Tirtheka) तीर्थकर जैनी फिरके के पुजारी।"

(५) पं० लखराम जी आर्य्य समाजी ने 'रिसाला जेहाद' नामा पुस्तक में पृ० २५ पर एक नकशा उन देशों का दिया हुआ है। जिन में मुसलमानों का मत फैला, उसी नक्शे की कैफियत के खाने में देशों के नाम के सामने अन्य धर्मों के नाम भी लिखे हुवे हैं, जो वहां किसी समय में उन देशों में फैले थे, उस में मिश्र (Egypt) और नाटाल (Natal South Africa) देशों के सामने जैनी भी लिखे हैं भावार्थ पण्डित जी के लेखानुसार मिश्र नाटाल आदि देशों में भी जैन धर्म की ध्वजा फहरा रही थी।

(६) 'Oriental" October 1802, page No 23,24) 'ओरियंटल" पत्र माह ओक्टूबर सन १८०२ के पृ० २३ व २४ पर "भारत वर्ष में सब से पुरानी इमारत" नामा लेख

में भी जैनियों का मिश्र देश से सम्बन्ध लिखा है स्थानाभाव से उस लेख को यहां प्रकाशित नहीं किया गया सो पाठकगण क्षमा करें—

इन उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट तौर पर सिद्ध होता है कि जैन धर्म किसी समय में सारे एशिया, युरोप, अफ्रीका आदि देशों में भी फैला हुआ था—

अब मैं आप लोगों के सामने कुछ अजैन ग्रंथों के प्रमाण रखता हूं सो कृपया ध्यान पूर्वक पक्षपात तजकर विचार करें—

महाभारत के आदि पर्व अध्याय ३ श्लोक २६ में लिखा है कि—

साधयामस्तावदि त्युक्त्वा प्रातिष्टतो तङ्कस्ते कुण्डलेगृहीत्वा सोऽपश्यदथ पाथिनग्न क्षपणकमा-गच्छन्तमुहुर्मुहुर्देश्य मानमदृश्य-मानंच ॥१२६॥

भावार्थ, मैं यत्न से जाऊंगा ऐसा कह कर उत्तंक ने उन कुण्डलों को लेकर चल दिया उसने रास्ते में नग्न "क्षपणक" को आते हुए देखा—

अद्वैत ब्रह्म सिद्धि का बनाने वाला "क्षपणक" को "जैन साधु" लिखा है देखो (कलकत्ते की छपी हुई पृ० १६७)

"क्षपणका जैन मार्ग सिद्धान्त प्रवर्त का इति कोचित,,

अर्थ "क्षपणक" जैनमत के सिद्धांत को चलाने वाले कोई होते हैं——

उपरोक्त कथन सिद्ध करता है कि महा भारत के समय जैन सिद्धांत को चलाने वाले क्षपणक (जैनसाधू) मौजूद थे—

मत्स्य पुराण के २४ वें अध्याय में लिखा है कि—

गत्वाथ मोहपामास रजिपुत्र न वृहस्पतिः ।
जिनधर्म समास्थाय वेद वाह्यं सवेदवित् ॥

अर्थ-उनरजि के पुत्रों को भी 'बृहस्पति' जी ने उनके पास आकर मोहा और आज्ञा दी, कि तुम सब "जैन धर्म के आसरे हो जाओ" ऐसा कहकर बृहस्पति जी भी वेद के बाहर मत को चलाने भए।

पाठको ! जरा विचार कर देखो आप लोगों को मालुम होगा कि वेदों में "बृहस्पति जी" की बहुत प्रशंसा लिखी है इस से यह मतलब निकला कि वेदों के पहिले भी बृहस्पति जी हैं और जैन धर्म, वेद और बृहस्पति जी दोनों से भी पहिले का रहा, जैन धर्म पहिले का ही नहीं वरन 'बृहस्पति जी' जो कि ब्राह्मणों के अति मान्य विद्यासागर गुरु समझे जाते हैं उन्होंने भी 'जैन धर्म के आसरे हो जाओ" कहा है—

जैनियों के प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव जिनको "आदि नाथ" स्वामी कहते हैं उनके स्मरण करने का कितना महात्म्य लिखा है—

'शिवपुराण में लिखा है कि—

अष्ट षष्टिपुतीर्थेषु यात्राया यत्फलं भवेत् ।
आदिनाथस्य देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत् ॥

अर्थ—अड़सठ (६८) तीर्थों की यात्रा करने से जितना फल होता है उतना ही फल श्रीआदिनाथ जी के स्मरण करने पर होता है।

यजुर्वेद संहिता अध्याय ९ वां श्रुति २५ में ऐसा लिखा है कि—

वाजस्य नु प्रसव आवभूवेमाच विश्वाभुवनानि सर्वतः सनेमिराजा परियाति विद्वान् प्रजा पुष्टिं वर्धमानो अस्मे स्वाहा. ॥

इस श्रुति में श्री नेमनाथ जी की प्रशंसा करते हुए आहुति दी है। आप लोगों को अच्छी तरह मालुम होगा कि जैनियों के २२ वें तीर्थंकर का नाम श्री नेमनाथ जी है।

"हनूमान नाटक" (बम्बई के खदमो वकटेश्वर प्रेस में सम्वत १९५७ में छपा) उसके पत्रे ७ पर यह श्लोक है।

य शैवा. समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदांतिनो।
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाण पटवः कर्तेति नैयायिका ॥
अर्हन्नित्यथ जैन शासनरताः कर्मेति मीमासकाः।
सोऽयवो विदधातु वान्छित फलं त्रैलोक्य नाथ.प्रभुः

(अ० १ श्लोक तीसरा)

नोट—आदिनाथ भगवान का जैन सम्वत इस पुस्तक के आदि मे जानना।

॥ धर्म ॥

धर्म उसे कहते है जो वस्तु के स्वभाव को प्रगट करता है यानी "वस्तु स्वभावो धम्मो" जो हमारा निज स्वभाव केवलज्ञान है उसका प्रगट होना जैसे अग्निका स्वभाव उष्णता इत्यादि। धर्म जीव के चलने में सहाई होना है जैसे मछली के चलने में जल सहायक है जो २ धर्म के विरुद्ध कार्य है उसको अधर्म कहते है, धर्म अधर्म अनादि है। धर्म हमारा निज स्वभाव है इसको सब मानते यानी हमारा यह स्वभाव है कि —

(१) हमको कोई न मारे पस हमको भी किसी जीव का घात नहीं करना चाहिये।

(२) हम से कोई झूँट नहीं बोले पस हमको भी झूठ नहीं बोलना चाहिये।

(३) हमारी कोई चोरी न करे पस हमको भी चोरी न करनी चाहिये। इत्यादि २

What's ill to self do it not against Others

धर्म स्वभाव आप ही जान।
आप स्वभाव धर्म सोई जान॥
जब वह धर्म प्रगट तोहे होइ।
तब परमातम पद लख सोइ॥

अथवा इस आत्मा का गुण अनत दर्शन, अनत ज्ञान, अनत वीर्य और अनत सुख जो है वह घातिया कर्मों के क्षय करने पर आत्म स्वभाव केवल ज्ञानादि प्रकट होता है अथवा उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संजम, तप, त्याग, अकिंचन और ब्रह्मचर्य दश लक्षण रूप धर्म है तथा रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र) स्वरूप है तथा जीवन को दया रूप धर्म है ऐसे पर्याद बुद्धी शिष्यनि के समझाने के अर्थ आचार्यों ने धर्म शब्द के चार प्रकार ,वरनन किया तोह वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव ही दश लक्षण है। क्षमादि दश प्रकार आत्मा का ही स्वभाव है। सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्र ह आत्मा तै भिन्न नहीं। दया है सो ह आत्मा का ही स्वभाव है। यानो "अहिंसा परमो धर्म" यह धर्म जीव मात्र का धर्म है जो जिनेंद्र भगवान करि कहा गया है। धर्म अनादि है स्वर व्यंजन अनादि हैं। धर्म तीर्थंकरों केवल ज्ञानियों के मुख से प्रगट होता है। जैसे कमल के उत्पन्न होन का स्थान सिर्फ जल है ऐसा भगवान जिनेंद्र करि कहा हुआ धर्म उसको जैन धर्म कहते हैं या सनातन धर्म भी कहते हैं। जो इस धर्म को धारण करता है उसे जैनी या श्रावक कहते हैं यदि कोई जैन कुल में उत्पन्न हो, मिथ्यात और कुसगति के प्रसङ्ग से धर्मके विरुद्ध आचरण करे या मन मानी तान गावे तो उसके दृष्टांत से जैन धर्म पर आक्षेप नहीं

हो सक्ता है।

जैन धर्म के उसूलों को पढ़िए अथवा उनका मनन करिए तो ज्ञात होगा कि यह अमूल्य रत्न है। इस बात को सत्य प्रमाणिए कि यदि जैन धर्म में जोव लग जावे तो वह अपने को धन्य समझेगा। बाज़ार में हम एक धेले की हांडो लेन जाते हैं उसको खूब टंकारा देकर परीक्षा करते हैं कि फूटी न हो, जो पानी भरने पर सब निकल जावे। क्या भाइयों हमको भी धर्म परीक्षा नहीं करना चाहिए? अवश्य करना चाहिए यह हमारे परभव का सुधार करने वाला और सार वस्तु है। हांडी को, असार उसको जांचकरें और सार वस्तु "धर्म" की जांच न करें। इसका न्याय करना हर स्त्री पुरुष का परम कर्तव्य होना चाहिए। पस इन चार रत्नों (देव गुरु धर्म शास्त्र) का हर एक को परखना उचित है प्रमादी नहीं रहना, यथारत्न धर्म वही जीव धारण कर सक्ता है जो प्रमादी (आलसी) न हो और विनयवान हो। विनय से विशेष गुण प्राप्त होते हैं जैसे एक बरतन में कड़ी कड़ी सूखी कोंपलें भरिए और उस ही बर्तन में हरी नरम नरम कोंपलें उसी जाति की भरिए तो यह स्पष्ट ज्ञात होगा कि हरी हरी कोंपलों की तादाद तारूडी से कई गुनी ज्यादा होगी। इसी तरह विनयवान जीव के हृदय में यह जैन धर्म प्रवेश करता है धर्म का मूल ही "विनय" है, विनय पांच प्रकार का है।

दर्शन विनय—आत्मा और पर का भेद जानना, सम्यग्दर्शन के धारक मे प्रीति करना।

ज्ञान विनय—ज्ञान का आदर करना बहुत आदर ते पढ़ना ज्ञानी जन और पुस्तक का बड़ा लाभ मानना।

चारित्र विनय—अपनी शक्ति प्रमाण चारित्र धारण में हर्ष करना, दिन २ चारित्र की उज्जलता के अर्थि विषय कषायनि को घटावना, तथा चारित्र के धारकनि के गुणनि में अनुराग सहित आदर करना सो चारित्र विनय है।

तप विनय—इच्छा कू रोक मिले हुए विषयन में सन्तोष कर ध्यान स्वाध्याय में लगना और अनशनादि करना काम के जीतने को, सो तप विनय है।

उपचार विनय—पंच परमेष्ठी का हर तरह विनय सो उपचार विनय है। इस के दो भेद हैं प्रत्यक्ष विनय यानी पंच परमेष्ठी के सन्मुख विनय करना और "परोक्ष विनय" यानी पंच परमेष्ठी का ध्यान करना।

विनय वादी के ३२ भेद होते हैं यानी — मन वचन काय और दान। इन चार से आठ का विनय करना। यानी—माता, पिता, देव, नृप, जाति, बाल, वृद्ध, और तपस्वी।

॥ गजल ॥

धर्म वो चीज है भाई कि जिसकी शक्ति न्यारी है।
राग और सोग भी टारे यह उस में सिफ्त भारी है॥
अरोगी हो गए कुष्टी दरिद्री धन का धारी है।
अग्नि जल डर जहा होवे धर्म वा मदद गारी है॥
शूली स सेज को तारा, किया श्रीपाल दधिपारा।
अग्नि में फूल कर दाने जहा सीता बिठारी है॥
वो कपटी चोर अंजनसा भी पहुँचाया मुकतिपुर में।
मिली जगल में लछमन राम को सेना जो भारी है॥
जगत के देव, गुरु, देखे किसी के संग नारी है।
कोई क्रोधी कोई लोभी नाम जहां मुरारी है
धर्म सब जगत में मानें नहीं जाने हैं मर्म उसका।

धरम वो सारथी हैगाके जिसकी मुक्त नारी है ॥
सेवक तुम हो गए मूरख जो अबतक धर्म ना जाना ।
धरम हिंसा में गहकर तैने अपनी गति बिगारी है ॥

॥ दीप मालिका ॥

प्रिय बन्धु वर्गो ! २४ वें तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी का धर्म चक्र चल रहा है, वे कार्तिक कृष्णा अमावस्या के सूर्य निकलने से पहले मोक्ष पधारे थे यानी सिद्ध होगए, उसी समय उनके गणधर श्री गौतम स्वामी को केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ था चूंकि केवल ज्ञान होने पर कुछ रात्रि बाकी थी, देवता ने रत्नों के दीपक जलाए और मनुष्यों ने जो कपूरादि के। सबने केवल ज्ञान और मोक्ष लक्ष्मी का पूजन किया इस यादगार में दीप मालिका (दिवाली) सब दूर मनाया जाने लगा मगर कुछ काल पश्चात काल दोष में लक्ष्मी देवी की कल्पना होगई। बहुतसे तो यह विचार करते हैं कि लक्ष्मी देवी रात्रि में घर २ आती है सो उसके आगमन के लिये बड़ी तय्यारी करते हैं ताकि वह प्रसन्न होकर गृह का वास गृह में कर देवे।

दक्षिण प्रान्त, गुजरात प्रान्त में तो पचांगों में भी इस दीपावली से नया वर्ष प्रारम्भ होता है। प्राय सब जगह नई बहियां इसी दिन से बदलते हैं। महावीर स्वामी श्री पावापुर जो सिद्ध क्षेत्र से निर्वाण हुए थे। डाकखाना गिरियक जिला पटना बंगाल है। वह स्थान बड़ा सुंदर है जो आनन्द वहां जाने पर प्राप्त होता है उसे केवली भगवान ही जानते हैं। हमारी वन्दना बारम्बार होवे। इस पवित्र दिन में उत्तम कार्य पूजा दान धर्मादि करने चाहिये। जूआ आदि पापारम्भ रोकना चाहिए। कृपया इस पवित्र त्योहार को दिवालिया त्योहार न बनावें।

" जूआ समान इहलोक में, आन अनीत न पेखिये ।
इस विसनराय के खेलको, कौतुक हू नाहिं देखिये ॥

जैनियों को अपनी २ बहियों पर विक्रम सम्वत के साथ महावीर सम्वत जो अब २४५२ कार्तिक शुक्ला १ से शुरू हुआ डालना चाहिये। उसके साथ २ श्री विक्रम सम्वत ७८ अंक का भी लिखना चाहिये यानी इस प्रकार —

॥ ॐ ॥

नम सिद्धेभ्य ।

श्री परमात्मनेनम । श्री वीतरागायनम ।

श्री जिनायनमः ॥

श्री ऋषभदेवायनम ॥ ॥ ॥ श्री महावीरायनमः ।

४१३४ २६३०१०८२०३१७५५२५१२१९९१९०००९९९९९९२०९२०९९९९-
९९९००९९०९०००९००९०००००००९००९०६०४८२

- श्री ऋषभ निर्वाण स० ७८ अङ्क प्रमाण

श्री महावीर निर्वाण स० २४५२

यों तो धर्म थोड़ा बहुत सभी साधन करते हैं परन्तु यथावत धर्म तो धीर पुरुष ही धारण कर सकते हैं । जिनका ममत्व कनक कामिनी में ज्यादा है। वे भाव कम धारण कर सकते हैं इस लिये लोभ और काम को जीतना योग्य है ।

हमको मान कषाय के वस कोई धर्म विरुद्ध विषय या अनुचित कथन नहीं बोलना चाहिये जैन धर्म का उसूल आत्मा को निर्मल करना है। जिनेन्द्र भगवान की पूजा का अचिंत्य फल है परन्तु हमारी क्रिया यथावत ठीक नहीं बनना इससे लौकिक में भी उच्च प्रतिष्ठा प्रगट नहीं होती है। हम म से बहुतों ने तो मंदिर को स्नान स्थान Bath room समझ लिया है मंदिर जी में तेलादि लगाकर गए स्नान किया दर्शन कीया या किसी पुजारी से अर्घ ले चढ़ा घर वापिस आगए सो ऐसे भाइयों से प्रार्थना है कि सब कार्यों का नफा नुकसान सोचना चाहिए। पुण्य का संचय ज्यादा करना चाहिये । भावों को मंदिर में स्थिर रखना चाहिए । कई मतमतांतर के भेद से हम जैन धर्म का तेरापंथ कहते हैं। जैनी पूजा करने से पहिले अर्हन्त भगवान की स्थापना कर लेते हैं क्योंकि वे निर्दोष देव को पूजते हैं। धर्म में प्रत्यक्ष और परोक्ष कथन से दो भेद हैं प्रत्यक्ष कथन को कसौटी पर परख लीजिए और परोक्ष को अनुमान से। जो केवल ज्ञान द्वारा कहा हुआ है मानलेवें। जैसे हम यह जानें कि आप अपने निज कार्य में झूठ नहीं बोलते हैं तो यह स्वयं न्याय से सिद्ध है कि आप दूसरे के कार्य में झूठ नहीं बोलते हैं। बस आप के वचन सत्य प्रमाण हैं इसी तरह धर्म के शास्त्र को चर्चा जाननी याने प्रत्यक्ष ठीक है तो परोक्ष स्वयं ठीक है।

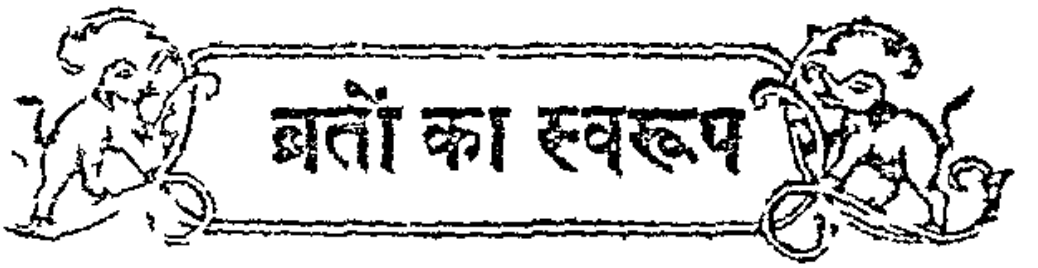

व्रतों का स्वरूप

मुनि के महाव्रत सकल व्रत होते हैं और श्रावक के १२ व्रत होते हैं यानी —

५ अणुव्रत (अहिंसा, सत्य, परस्त्री त्याग, चोरी त्याग परिग्रह प्रमाण)

३ गुण व्रत (दिग व्रत, देश व्रत, अनर्थ दंड त्याग)

४ शिक्षा व्रत (सामायक, प्रोषधोपवास, अतिथि सविभाग यानी वैयावृत, भोगोपभोग परिमाण)

इनका पूरा २ वर्णन जैन शास्त्रों से जानना।

श्री गोमट्टसार कर्म काड छटे अधिकार मे ८०२ वें श्लोक मे कहा है:—

अर्हत्सिद्ध चैत्यतपः श्रुतगुरु धर्म संघ प्रत्यनीकः।
बध्नाति दर्शन मोह मनत संसारि को येन ॥

अर्थ—जो जीव अरहंत सिद्ध प्रतिमा तपश्चरण निर्दोष शास्त्र निर्ग्रंथ गुरु वीत राग प्रणीत धर्म और मुनि आदि का समूहरूप संघ—इनसे प्रतिकूल हो अर्थात इनके स्वरूप से विपरीतता का ग्रहण करे वह दर्शन मोह को बाधता है कि जिसके उदय से वह अनन्त संसार में भटकता है—

अथ
चार आराधना स्वरूप

॥ लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

नष्ट किये रागादि जिन तिन पद हिरदय धार ।
रूप चार आराधना, कहू स्वपर हितसार ॥ १ ॥
जोगीरासा सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन तप चार अराधन जहँ ।
भव सागर से भव्य जीवन कू निश्चै पार करे हैं ॥
इन संक्षेप स्वरूप बखानू सुनकर कर सरधाना ।
फिर इनके अनुसार चलो भव्य जो पाओ शिवथाना ॥ २ ॥
साचें देव सुशुरु साचें गुरुकी दृढ़ श्रिद्धा धारो ।
ताही को जिन आगम माहीं सम्यग्दर्श उचारो ॥
हित उपदेशी वीतराग सर्वज्ञ देव साचे हैं ।
तत्व स्वरूप यथारथ भाषैं सोई श्रुत साचे हैं ॥ ३ ॥
विषय आश आरभ परिग्रह जिनके बिलकुल नाहीं ।
ज्ञान ध्यान तप लीन रहैं सतगुरु ते जानो भाई ॥
संशय विपरिय अनध्यवसायजु बिन तत्वा को जानैं ।
ताही को आगम के ज्ञाता सुम्यग्ज्ञानी मानैं ॥ ४ ॥
जीव अजीव करम का आश्रव बंध अरु संवर भाई ।

निर्जर मोक्ष तत्त्व ये साता सार जगत के माई ॥
दर्शन ज्ञान मई सुजीव विन जीव पच विधि जानो ।
पुद्गल धर्म अधर्म और आकाश काल युत मानो ॥ ५ ॥
शुभ अरु अशुभ नियोग जानिये कर्माश्रव दुख दाता।
जीव साथ सबंध कर्म हो सोही बंध कहाता ॥
समदमादि कर कर्म रोकना संवर जानो सोई ।
क्रमवर्ती कर्मों का झरना सोई निरजर होई ॥ ६ ॥
सकल कर्म का एक साथ कर देय नाश जो ज्ञाता।
ताकू मोक्ष कहत श्रुत पारग सुख अनन्त को दाता ॥
अब चारित्र आगाजन वरनू तेरह भेद कहाई ।
पाच महाव्रत पाच समिति ह तीन गुप्ति युत भाई॥ ७॥
दया काय छैहो की पालै सोय अहिंसा व्रत है ।
सत्य महा व्रत दूजो जानो सत्य बोलने नित है ।
बिन दीये नहि लेवै कुछ भी सो अचौर्य व्रत जानो ।
माता भगनी सम तिय समझै ब्रह्मचर्य सो मानो ॥ ८॥
चतुर वीस विधि परिग्रह में से रखै न तिल तुप भर है।
परिग्रह त्याग महाव्रत पचम अब पच समिति उचर है॥
जीव रहित मयत्री को लखिकर चलै समिति ईर्या है ।
संशय रहित वचन प्रिय बोलै भाषा समिति क्रिया है ॥९॥
एक बार निरदोष अशन लै समिति एपणा जानो ।
धरै उठावे देख यही आदान निक्षेपण मानो ॥
त्रस स्थावर जीवों को पीड़ा नहि हावे जासे ।
क्षेपै मल मूत्रादि जहाही समिति क्षेपण खासे ॥ १० ॥
करै निरोध मन वचन काया भले प्रकार सुज्ञानी ।

ताही कूँ त्रिय गुप्ति जानिये अब तप कछ बखानी
अनशन ऊनोदर व्रत संख्या रस परित्याग करें है
विविक्त शयन काय क्लेश तप बाह्य छै उचरें है ॥ ११
प्रायश्चित्त विनय वैया व्रत स्वाध्याय व्युत्सर्ग
ध्यान सहित छै अभ्यन्तर तप दाता सुख अप वर्ग
इन्द्रियादि मद नाशन भोजन त्यागे अनशन होई
अथवा न्यून भरे उर अपनो ऊनोदर तप सोई ॥ १२
भोजन कछ नियम प्रेम सें व्रत संख्या यह जानं
दुग्धादिक रस के त्यागन को रस परि त्याग सुमानो
शयन बैठना करैं इकन्त विविक्त शयन याहै
देह नेह तज करें विकट तप काय क्लेश कहो है ॥ १३
दोष दूर कू दड लैय गुरु से प्रायश्चित्त मानो
गुण गुणियों का आदर करना सो तप विनय बखानो
पूज्य जनों की सेवा करना सो तप वैया व्रत है
ज्ञानाभ्यास जु करैं करावैं सो स्वाध्याय सुतपहै ॥ १४
बाह्य अभ्यन्तर सग तजे व्युत सर्ग सुतप बरनाइ
चित्त करें एकान्त ध्यान यह द्वादश तप सुख दाई
या प्रकार व्यवहार अराधन कही तनक मैं माई
अब स्वरूप निश्चय कछु भाषताहि सुनो मन लाई ॥ १
गुण अनन्त को धाम निजातम सबसे भिन्न निराला
ऐसी दृढ श्रद्धा है जाके सो सम्यक्ती आला
अजर अमर अविनाशी निरभय सुख आदिक गुणधा
जानै यों निज आतम कू सो सम्यग्ज्ञानी नामी ॥ १
निज आतम के गुण समूह में होवै निश्चल लीन
वाही को सम्यक चारित्री कहते हैं परवीना

होय अनंती इच्छा मग में तिन्हे हर्ष युत रोकै ।
सोई सम्यक तपका धारी सो शिव सुख अब लोकै ॥१७॥
निश्चय आराधन का भाई स्वरूप यह तुम जानो ।
दोउन को उर भीतर धर के करिये निज कल्यानो ॥
इन दोउन के धारे बिन नहिं होगा तुम निस्तारा ।
भव सागरमें भवि जीवन कू इनका एक सहारा ॥ १८ ॥
यह सन्सार असार यामे सार कछु नाहिं दिखाई ।
मात पिता सुत तिय वैभव सब देखत देख नसाई ॥
रक्षा करै मरन से तुमरी ऐसो नाहिं दिखावै ।
बिना बात निज रक्षाकारन क्यों पर कू अपनावै ॥ १९ ॥
अनत काल से या जगमाहीं दुख ही दुख तुम भोगे ।
यह जग सब दुखही का घर है या तज सुख पाओगे ।
बुरे भले जो कर्म किये है तुमने या जग माहीं ।
तिनके फल तुम इकले भोगो और भोगता नाहीं ॥ २० ॥
देह जीव जब जुदे २ है तुमरे सुन ये भैया ।
फिर क्यों कर हो एक तुम्हारे पुत्र पितादिक भैया ॥
घृणित वस्तु की देह बनी है यामें शुच कछु नाही ।
यातें यासू प्रेम तजो अब समझ सोच मनमाही ॥ २१
मन वच काय त्रियोग चले ते होय करम का आना ।
याहि तजो तुम मेरे भाई ये दुख देवै नाना ॥
जैसे बनै तिसी विधि आश्रव रोको मेरे भाई ।
याही के रोकन मे अपनी जानो खूब भलाई ॥ २२ ॥
अपने आप करम जो झरहैं तित सो काज न सर है ।
बल पूर्वक तुम कर्म खिपाओ जो पाओ शिव घर है ॥

लोक तीन चौदह राजू है या में फिरा अपारा ।
समता धार बिन सब थानक दुखही दुक्ख निहारा ॥२३
इन्द्र नरेन्द्रादिक की पदवी मिलना दुरलभ नाही ।
सम्यग्ज्ञान पावना दुरलभ कहो श्रुतों के माही ॥
सोलह कारण कू तुम जानो सर्व सुक्खकी दाता ।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन त्रय धर्म जानियै भ्राता ॥२४॥
दया मई है धर्म धर्म दश विधि भी किया बखाना ।
वस्तु स्वभाव धर्म कहते हैं अर्थ सबन इक जाना ॥
मोह भाव कू त्याग धर्म कू पालो मेरे भाई ।
जासे शिव नगरी के राजा हो वो यहा से जाई ॥२५॥
नर भव पाय काज यह करना चूकै सोय गमारा ।
फिर यह समय कठिन है मिलना श्रीगुरु येम उचारा ॥
आराधन आराधा भाई जबतक दम में दम है ।
पद्मावतिकी भूल सुधारा हाथ जोर वह नमि है ॥२६॥

॥ दोहा ॥

दर्शन ज्ञान चारित्र तप, हैं सब सुख दातार ।
ये मम घट मन्दिर वसो, करकें निश्चल प्यार ॥२७

॥ इति ॥

चार आराधना स्वरूप शुभम्

राजा मधु ने समाधि मरण व मुनि अवस्था धारण की ताका कथन तथा सप्त ऋषियों का चैत्यालय विषय उपदेश श्री—पद्मपुराण (जैन रामायण) से संक्षिप्त उधृत—

श्री पद्मपुराण पर्व (८९) नवासी प्रारम्भ-संक्षेप से।

जब श्रीरामचन्द्र जी लक्ष्मण जी का तथा उनकी रानियों सीता और विशल्या का अयोध्या में राज्याभिषेक हो चुका। तब महा प्रीति से भाई शत्रुघन से कहते भए कि जो देश तुम्हें रुचे सो लेवो। तब शत्रुघन ने मथुरा मांगी। तब राम बोले कि यहां राजा मधु का राज्य है और यह रावण का जमाई है अनेक युद्धों का जीतन हारा इसको चमरेन्द्र ने त्रिशूल रत्न दिया है यह हरवंशियों में सूर्य समान है उसका पुत्र लवणार्णव नाम का है दोनों महाशूरवीर हैं इस लिए मथुरा टार और राज्य लेवो। तब शत्रुघन ने न मानी और कहा कि मैं दशरथ का पुत्र नहीं जो मधु राजा को न जीतूं। इत्यादि—

और मथुरा को रवाना हुआ। तब राम बोले कि जब राजा मधु के हाथ त्रिशूल रत्न न होवे उस समय युद्धकरियो। मथुरा नगरी के यमुना तट पर डेरे जा लगाए और मालुम हुआ कि राजा मधु रानियों सहित वन क्रीडा करे है आज छटा दिन है सब राज काज तज प्रमाद के वश भया है विषयों के बंधन में पड़ा है। मन्त्रियों ने बहुत समझाया सो काहू की बात धारे नहीं। जैसे मूढ रोगी वैद्य की औषधि न धारे। सो राजा शत्रुघन बलवान योद्धाओं के सहित अर्ध रात्रि के समय सर्व लोक प्रमादी थे और नगरी राजा रहित थी। सो मथुरा में प्रवेश करना भया और बंदी जनों के शब्द होते भए कि राजा दशरथ का पुत्र शत्रुघन जयवंत होवे। यह सुन लोगों को

महा दुख हुआ । तब उसको धीर बधाया कि यह राम राज्य है किसी को दुख नहीं होगा । शत्रुघ्न नगर में जाय बैठा, जैसे योगी कर्म नाश कर सिद्ध पुरी में प्रवेश करे। तब राजा मधु वन से महा कोप कर आया परन्तु शत्रुघ्न के सुभटों की रक्षा द्वारा नगर में प्रवेश न कर सका जैसे मुनि के हृदय में मोह प्रवेश न कर सके और त्रिशूल से भी रहित होगया तथापि महा अभिमानी मधु ने संधि न करी और युद्ध ही को उद्यमी हुआ । तब दोनों तरफ की सेनाओं में युद्ध होने लगा। शत्रुघ्न के सेना पति कृतांतवक्र ने मधु के पुत्र लवणार्णव को बाणों से वक्षस्थल को छेदा सो पृथ्वी पर आय पड़ा और प्राणांत भया तब पुत्र को देख राजा मधु कृतांतवक्र पर दौड़ा सो शत्रुघ्न ने ऐसे रोका जैसे नदी का प्रभाव पर्वत से रुके है । तब शत्रुघ्न के सामने कोई न ठहर सका जैसे जिन शासन के पण्डित स्याद्वादी तिन के सन्मुख एकांतवादी न ठहर सके। तैसे राजा शत्रुघ्नने मधु का बखतर भेदा जैसे अपने घर कोई पाहुना आवे और उसकी भले मनुष्य भली भांति पाहुनगति करे तैसे शत्रुघ्न ने घावों कर उसकी पाहुनगति करता भया अथानंतर राजा मधु, महा विवेकी शत्रुघ्न को दुर्जय जान आपको त्रिशूल आयुध से रहित जान पुत्र की मृत्यु देख और अपनी आयु भी अल्प जान, मुनियों के वचन चितारता भया अहो जगत का समस्त ही आरम्भ महा हिंसा रूप दुख का देन हारा सर्वथा त्याज्य है। यह क्षण भंगुर संसार का चारित्र उस में मूढ जन राचे इस विषे धर्म ही प्रशंसा योग्य है और अधर्म का कारण अशुभ कर्म प्रशंसा योग्य नहीं महा निंद्य यह पाप कर्म नरक निगोद का कारण है जो दुर्लभ मनुष्य देह को पाय धर्म विषे बुद्धि नहीं धरे हैं सो प्राणी मोह कर्म कर ठगाया अनंत भव भ्रमण करे है मैं पापी ने संसार असार को सार जाना, क्षण भंगुर शरीर को ध्रुव जाना, आत्म हित न किया प्रमाद विषे प्रवरता, रोग समान ये इन्द्रियों के भोग भले जान भोगे, जब मैं स्वाधीन था तब मुझे सुबुधि न आई, अब अंत काल आया अब क्या करूं, घर को आग लगी उस समय तलाब खुदवाना कौन अर्थ। और सर्प ने डसा उस समय देशांतर से मन्त्राधीश बुलवाना और

पूरन्श सेरणि औषधी भगवान कौन अर्थ इस लिए अब
विना तज निराकुल होय अपना मन समाधान में लाऊ
यह विचार वह धीर वीर राजा मधु घाव कर पूर्ण
हाथी चढा ही, भाव मुनि होता भया,
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुओं को मन वचन काय
कर बारम्बार नमस्कार कर और अरहंत सिद्ध साधु तथा
केवली प्रणीत धर्म यही मङ्गल है यही उत्तम हैं इनही का मेरे
शरण है अढाई द्वीप विषे पन्द्रह कर्म भूमि तिन विषे भगवान
अरहंत देव होय हैं ते त्रैलोक्य नाथ मेरे हृदय में तिष्ठो मैं
बारम्बार नमस्कार करू हू अब मैं यावज्जीव सर्व पाप योग
तजे, चारों आहार तजे, जे पूर्व पाप उपार्जे थे तिन की निंदा
करू हू और सकल वस्तु का प्रत्याख्यान करू हू अनादि
काल से इस संसार वन में जो कर्म उपार्जे थे मेरे दुःख
रून मिथ्या होवो। भावार्थ मुझे फल मत देवें। अब मैं
तत्वज्ञान में तिष्ठा त्यजने योग्य जो रागादिक तिन को तजू हू
और लेयवे योग्य जो निज भाव तिनको लेऊ हू। ज्ञान
दर्शन मेरे स्वभाव ही हैं सो मोसे अभेद हैं और जे
शरीरादिक समस्त पर पदार्थ कर्म के संयोग कर उपजे वे
मोसे न्यारे हैं देह त्याग के समय, संसारी लोक भूमि का
तथा तृण का सांथरा करे हैं सो सांथरा नही यह जीव ही
पाप बुद्धि रहित होय, तब अपना आप ही सांथरा है ऐसा
विचार कर राजा मधु ने दोनों प्रकार के परिग्रह
भावों से तजे और हाथी की पीठ पर बैठा ही
सिर के केशलोंच करता भया, शरीर घावों कर

अति व्याप्त है तथापि महा दुर्धरवीर्य को धर कर अध्यात्म योग में आरूढ होय काया का ममत्व तजता भया, विशुद्ध है बुद्धि जिसकी, तब शत्रुघन मधु की परम शान्त दशा देख नमस्कार करता भया और कहता भया हे साधो ! मो अपराधी का अपराध क्षमा करो, देवों की अप्सरा मधु का संग्राम देखने को आई थीं आकाश से कल्पवृक्षों के पुष्पों की वर्षा करती भई, मधु का वीर रस और शांत रस देख देव भी आश्चर्य को प्राप्त भए फिर मधु महा धीर एक क्षण मात्र में समाधि मरण कर महा सुख के सागर से तीजे सनत्कुमार स्वर्ग में उत्कृष्ट देव भया और शत्रुघन मधु की स्तुति करता महा विवेकी (मधुपुरी) मथुरा में प्रवेश करता भया। गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कह हैं कि प्राणियों के इस संसार में कर्मों के प्रसङ्ग कर नाना अवस्था होय है इस लिए उत्तमजन सदा अशुभ कर्म तज कर शुभ कर्म करो जिस के प्रभाव कर सुख समाधान को प्राप्त होवे धर्म द्वारा शत्रु भी क्षण में मित्र सुख द्वारा पूज्य होवे है सोई सार जो धर्म ताहि ग्रहण करो।

॥ इति त्रयासीवां पर्व पूर्ण भया ॥

सप्त ऋषि उपदेश

आगे पर्व ९० में चमरेन्द्र जिसने राजा मधू को त्रिशूल रत्न दिया था पाताल से आकर मथुरा नगरी पर कोप किया और मरी फैली।

पर्व ९१ — राजा शत्रुघ्न अयोध्या गया और जिनेन्द्र भगवान के गुण गाये इत्यादि।

पर्व ९२ में आकाश मे गमन करण हारे सप्त चारण ऋषि निर्ग्रंथ मुनीन्द्र मथुरापुरी आए जिनके नाम सुरमन्यु, श्रीमन्यु श्री निश्चय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलाल सजयमित्र, सो यह चातुर्मासिक में मथुरा के वन में वट के वृक्ष तले आय विराजे सो मथुरा में चमरेन्द्र द्वारा जो मरी फैली थी। इन सप्तऋषियों के प्रभाव कर नष्ट होगई वे चारण मुनि श्रुति केवली आकाश मार्ग होय कभी पोदनापुर कभी विजयपुर कभी अजोध्या पारणा को आवें। अर्हद्दत्त सेठ अजोध्या ने विचारा कि चातुर्मास में मुनि गमन न करें यह ऋषि पहले देखे नहीं कहा से आये ये जिन मार्ग विरुद्ध गमन करते हैं सो आहार न दिया उठ गया। तब उसकी पुत्र बधू ने आहार दिया। वे मुनि आहार लेय भगवान के चैत्यालय में

जिन शासन की प्रभावना करो घर घर जिन बिंब थापो, पूजा अभिषेक की प्रवृत्ति करो जिस करि सब शांति हो, जो जिन धर्म का आराधन न करेगा और जिसके घर में जिन पूजा न होगी दान न होयगा उसे आपदा पीड़ेगी जैसे मृग को व्याघ्री भखै तैसे धर्म रहित को मरी भखैगी। अंगुष्ठ प्रमाण भी जिनेन्द्र की प्रतिमा जिसके विराजेगी उस के घर में से मरी यूं भाजेगी जैसे गरुड़ के भय से नागिनी भाजे है चारण मुनियों के मुख शत्रुघ्न ने कही है प्रभो जो आप आज्ञा करी त्योंही लोक धर्म में प्रवर्तेंगे। अथानंतर मुनि आकाश मार्ग बिहार कर अनेक निर्वाण भूमि वंदकर सीताजी के घर आहार को आए सो विधि पूर्वक पारणा करावती भई, मुनि आहार लय आकाश के मार्ग विहार कर गए और शत्रुघ्न ने नगरी के बाहिर और भीतर अनेक जिन मन्दिर कराए घर घर जिन-प्रतिमा पधराई नगरी सब उपद्रव रहित भई वन उपवन फल पुष्पादिक कर शोभित भए, वापिका सरोवरी कमलों करि मंडित सोहती भई पक्षी शब्द करते भए कैलाश के तट समान उज्वल मन्दिर नेत्रों को आनन्दकारी विमान तुल्य सोहते भए और सर्व किसाण लोक सम्पदा कर भरे सुख सो निवास करते भए गिरि के शिखर समान ऊंचे अनाज के ढेर गांवों में सोहते भए स्वर्ण रत्नादिक की पृथ्वी में विस्तीर्णता होती भई सकल लोक सुखी राम के राज्य में देवों समान अतुल विभूति के धारक धर्म अर्थ काम विषे तत्पर होते भए शत्रुघ्न मथुरा में राज्य करें राम के प्रताप से अनेक राजाओं पर आज्ञा करता सोहै। इस भांति मथुरापुरी का ऋद्धि के धारी मुनियों के प्रताप कर उपद्रव दूर होता भया। जो यह अध्याय वांचे सुने सो पुरुष शुभ नाम शुभ गोत्र शुभ साता वेदनी का बंध करे जो साधुओं की भक्ति विषे अनुरागी होय और साधुओं का समागम चाहे वह मन वांछित फल को प्राप्त होय इन साधुओं के सङ्ग पायकर धर्म का आराधन कर प्राणी सूर्य से भी अधिक दीप्ति को प्राप्त होय हैं।

॥ इति बानवेंवां पर्व सम्पूर्णम् ॥

प्रिय सज्जनो, पढिये। इस प्रकार शास्त्र [illegible] धर्म की चरचा सुन यथावत श्रद्धान करोगे। इस कथन में जिन बिम्ब घर स्थापने का प्रसंग पाय मैं अल्प बुद्धि वाला दृष्टांत देता हूं कि नगर जैपुर में करीब इस प्रकार ३०० चैत्यालय हैं। मंदिर और चैत्यालय में कुछ फर्क नहीं है। चैत्यालय अनादि कल्याणकारी शब्द है यानी चैत्य—आतमा, आलय—जगह, भावार्थ, आत्म प्रदर्शन—प्राचीन समय में मन्दिर गृह को कहते थे—जिन 'मन्दिर" आज कल चैत्यालय का सूचक है—

श्रीयुत पद्मनन्द आचार्य कृत पद्मनन्द पच विंशत शास्त्र अध्याय ७ श्लोक २२ में लिखा है कि "कुंदुरी के पत्र बरोबर ऊंचा चैत्यालय और जौ बराबर ऊंची जिन प्रतिमा जे करावें हैं तिनके पुन्य की महिमा कौन वर्णन कर सके और तीर्थंकर पद का बन्ध करे है। इत्यादि—

इसी दृष्टांत पर हमारे पिताजी श्रीमान बाबू चतुर्भुजजी गवरमेन्ट पेन्शनर हाथरस, ने श्री महावीर दिगम्बर जैन मन्दिर सेरे बाजार निजी दो दुकानें तोडकर निर्माण सम्वत २४४६ में किया है।

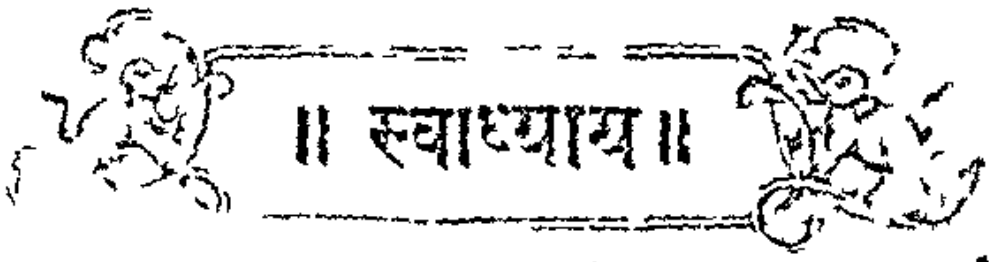

॥ स्वाध्याय ॥

प्रिय सज्जनो ! अब उन भाइयों भगवान परमात्मा की वाणी के बारे में एकाग्रचित हो सुनिए—यह वाणी ही मुख्य कर धर्म मार्ग दिखाने वाली है ।

जिनेन्द्र भगवान परमात्मा का जो धर्मोपदेश है उसको सरस्वती, सूत्र, आज्ञा, भगवत वाक्य, वेद, श्रुत, आमनाय, सूत्र, प्रवचन, श्रुत जिनवाणी या जिनवाणी माता शारदादि कहते हैं । उस वाणी को गणधरों ने जो चार ज्ञान (मति, श्रुति, अवधि और मनपर्यय) के धारक होते हैं मिलकर रचना की है । जिन पत्रों पर यह वाणी लिखी गई है उसको शास्त्र भी आगमादि कहते हैं । उसके पढ़ने, सुनने उपदेश करने, चिन्तवन करने तथा मनन करने को स्वाध्याय कहते हैं । यह वाणी अमृत ही है । इसके पाठी हो जाने से 'अमर' हो जाता है यानी जन्म मरण रहित हो जाता है । अमर होने का तीन लोक में और कोई दूसरा उपाय नहीं है जब तक इसका पठन होता है कर्मों की निर्जरा और पुण्य संचय होता है । उस स्थान पर सम्यग्दृष्टी देव देवांगना भी सुनने को आते हैं यह शास्त्र प्रमाण है और मुझ मंदबुद्धि को भी इसका कुछ परिचय हो चुका है । तीन लोक का हाल घर बैठे मालुम होता है । लौकिक और पारमार्थिक मार्ग अच्छी तरह दृश्य पड़ता है । श्री मूलाचार जी ग्रंथ में लिखा है कि जो जीव स्वाध्याय करता है वह संसार अंध कूप में नहीं पड़ता है जैसे डोरा सहित सुई नहीं खोती है । आचार्य उपाध्याय साधु मुनीश्वर भी नित्य स्वाध्याय करते हैं । श्री आदि पुराणजी पर्व २० श्लोक ३५ पत्र २१८ में लिखा है 'जिन सूत्र सो तत्व ज्ञानिन करि आराधिबे योग्य है । जिन शासन अनादि निधन कहिए आदि अर अंत नाहीं और सूक्ष्म कहिए अति सूक्ष्म है चरचा जा विषै और सत्य स्वरूप का प्रकाशक है और पुरुषार्थ कहिए मोक्ष ताके उपदेश तें जीवन का हितू है जित कहिए अति प्रबल है । अर

अनंथ कहिए काहू करि जो ता न जाय । अमित कहिए संख्या है ताका पार प्रभु हो पावै । इस जिनवाणी के सर्व अधिकारों को यानी धवल, जयधवल, महाधवलादि की रचना जेष्ट शुदी ५ क दिन की गई है यह दिन श्रुत पचमी नाम से विख्यात है। इन ग्रन्थों के दर्शन मूडबिद्री में होते है। आज कल इनके पाठ करने की योग्यता किसी में नही है। और उन ग्रंथों को भूतबलि और पुष्पोदत मुनियों ने धरसेन मुनि जो गिरिनार के शिखर चद्रगुफा के वासी के उपदेश से रचे जेष्ट शुदी ५ के दिन रच कर पतिष्ठा की। ऐसे महान ग्रंथों की पद श्री नेमचद्र सिद्धांत चक्रवर्ती स्वाध्याय कर रहे थे उस वक्त मंत्री चामुण्डराय के आने पर उन महान ग्रंथों को बंद कर दिया और श्री गोमट्टसार इत्यादि ग्रंथ रचे। इन के दर्शन से जीव ज्ञान को प्राप्त करेगा और प्राचीन रत्न मई प्रतिमाओं के दर्शन है मानों तीन लोक की विभूत वही पर इकट्ठी है। इस लिए हर एक को वहाँ जाकर दर्शन करना चाहिए। यात्रा पुस्तक हमारे यहा से कुछ नियमों पर बिना मूल्य मिलती है।

उस दिन शास्त्रों को बाहर मेज के उपर विराजमान कर धूप पूजादि करनी चाहिए। हम प्रगट किए बिना नहीं रह सके कि शहर हाथरस में जिनवाणी की सत्कार और पूजा श्रुत पचमी को एक महान आदर रूप में होती है जिस के लिए जैन समाज तथा ला० मिश्रीलालजी सोगानी मंत्री सरस्वती भंडारको कोटि धन्यवाद है —जो जीव उस दिन व्रत करते है महापुण्य उपार्जन करते है। परपराय स्वाध्याय के प्रसाद से मोक्ष के पात्र बनते है॥ जिनवाणी की रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है।

जिनवाणी रक्षा।

श्रीयुत अमोलकचंद जी मंत्री सरस्वती भंडार विभाग श्रीमती दिगम्बर जैन मालवा प्रांतिक सभा ने इस विषय में जो

लेख विवरण १२—१३ वर्ष में दीया है उसका संक्षेप यहां प्र
करता हूं—मंत्री जी लिखते हैं।

"आज मुझे बड़ा हर्ष है मेरे हृदय में आनन्द की ल
उठ रही हैं मेरा भाग्योदय है कि सरस्वती सेवा का कार्य प्रा
हुआ है। जीव अनादि से भ्रमण कर रहा है और चतुर्गति रू
संसार में जन्म मरण के दुःख उठा रहा है। इस को शीतल
देने वाला एक जिनवाणी सरस्वती ही है। हिताहित मार्ग दिख
कर स्व, पर, भेद विज्ञान, पैदा करती है। वस्तु स्वरूप को यथार्थ
कहती है जैन धर्म का मूल जिनवाणी है। इस की रक्षा में जैन
धर्म की रक्षा है जिनवाणी की उन्नति में जैन धर्म की उन्नति है।
यदि आप यह जिनवाणी न होती तो कोई नहीं जान सकता था
कि जैन धर्म क्या है संसार और मोक्ष क्या है? आचार्यों ने
कठिन परिश्रम से जिनवाणी के ग्रंथ निर्माण कीये और उन्हें
के हमको दर्शन और उपदेश आज मिल रहा है लेकिन दुःख की
बात है कि इस में से भी हमारी अज्ञानता और आपसी फूट के
कारण अनेक स्थानों के सरस्वती भंडारों के बहु संख्यक ग्रंथ
जीर्ण शीर्ण होकर चूहों दीमकों के ग्रास बन कर नष्ट हो रहे
है। कितने ही दूसरी भाषाओं में होने से हम से छूट रहे हैं। क्या
यह सुनकर आप को दुःख न होगा? अवश्य होगा। भाइयो!
जरा ध्यान दो, यदि जैन धर्म की रक्षा और उन्नति के मूल ये ग्रंथ
ही न रहेंगे। तब यह आप का धर्म कहां सुनाई पड़ेगा? कहां
आप की आम्नाय और कहां आपका पंथ रहेगा। इस लिए यदि
आप सच्चे धर्मोन्नति के इच्छुक हैं तो जहां जहां ग्रंथ आलमा
रियों में बन्द रहकर जीर्ण शीर्ण हो रहे हैं, उन ग्रंथों को निकल
वाइए, बाहर धूप दिलाइए यदि जीर्ण होगए हों तो उनकी
प्रति दूसरी कराइए। कनाड़की आदि दूसरी भाषाओं में हों तो
हिंदी लिपि कराइए। इत्यादि बातों का प्रबंध करना आपका हमारा
परम कर्तव्य है", समाप्त।

प्रिय सज्जनो! मंत्री जी के बहु मूल्य वाक्यों को सुन
कर आप बहुत प्रसन्न हुए होंगे। श्रीमान धर्मवीर राय बहादुर
सर नाईट सेठ हुकमचंद जी सभापति तथा श्री० ला० भगवानदास

श्री जैन जाति भूषण महामन्त्री श्री दिगम्बर जैन मालवा प्रांतिक सभा बड़नगर (मालवा) राजपूताना को कोटिशः धन्यवाद है कि सभा और औषधालय द्वारा भारत वर्ष में अधिक नाम पहुंचा रहे हैं।

आशा है कि जहां तहां ऐसे गुणों की दशा की यहां के सज्जन न पंच सुद रक्षा करेंगे। मालवा की सभा के निवेदन पर भी सर्व अवश्य ध्यान देने की कृपा करेंगे।

जिनवाणी की रक्षा और स्वाध्याय करना कराना हम जैनियों का परम कर्तव्य होना चाहिए। इन कार्यों में मन वचन काय और धन लगाना महा पुण्य और यश का कारण है इन कार्यों में धन लगाना मानो साथ में लेजाना है। कोठरियों में, आलय में, सन्दूकों में जिनवाणी की रक्षा ठीक २ नहीं होती है इस लिए हमको बड़े सज धज से बड़ी २ आलमारियों में विराजमान रखना चाहिए जहां हवा लगती रहे और दर्शकों को दर्शन मिलते रहें तथा पूजादि भी होती रहे। जीर्ण शीर्ण कर सदा के लिए जलांजलि न दीजिए। हृदय फटा जाता है इस महा अविनय को कृपया रोक कर प्रबंध करिए ज्ञान के विनय से केवल ज्ञान का बंध है। ऐसे अलमारीयों की चाबी एक स्थानीय अप्रमादी विनय वान भाई के पास रहना चाहिए ताकि वह सरस्वती का सर्व कार्य करे और स्वाध्याय करने वालों का मन्थर बढ़ावे। सूची रजिस्टर वगैरह सब रखनी चाहिए शास्त्र ही हमारे गुरुओं की जगह पर हैं। क्यों कि गुरुओं के दर्शन कठिन हो गए हैं।

॥ शंका ॥

यदि कोई शंका करे क्या जैनी निगुरे हैं? इस का समाधान इस प्रकार है—निगुरा उसको कहते हैं जो गुरु को नहीं मानता हो। जैनी लोगों के गुरुओं का स्वरूप पहले वर्णन कर चुके हैं जिन के गुण सर्वोत्कृष्ट होते हैं और उनका अभाव नहीं।

श्रीगुरु के प्रसाद कर अनन्तानन्त जीव अनन्त सुख में प्राप्त हो गए और होवेंगे। काल दोष से यदि वे दृष्टि न पड़े तो अन्य उनको अगृह नहा माने जा सकत है जैसे हंसा के न दीखत हुए अन्य पक्षी को हम को पक्षी नहीं हो सकती है। इस का आप स्व याय कर सकते हैं। जिस जीव में सिद्ध के गुण हों वह "सिद्ध" कहा जा सकता है। केवल "सिद्ध" नाम रखने से सिद्ध नहीं हो सकता है। देव गुरु शास्त्र का अविनय करना अनन्त दुख का कारण है और ऐसे दोष यदि एक दूसरे को न समझे तो प्रमाद का भाव लगता है नात कल्याण निमित्त धर्म उपदेश देना आवश्यकीय है। इस जीवन का केवल धर्म ही सहाय है धर्म न उपार्जा होय और बहुत काल तक जीने और सुख की इच्छा करे, तो कैसे बने। कर्मों की विचित्र गति है। क्षण में जीव पवत पर क्षण में खाड़े में क्षण में एक रस से दूसरे रस में, कभी विरस इत्यादि में आता है। देखिए हमारी अवस्था कैसी हो रही है, पं० भूदरदास जी कहते हैं ——

जोई दिन कटै सोई आयु में अवश्य घटै।
बूंद २ बीतै जैसे अञ्जुली को जल है॥
देह नित हीन होय नैन तेज हीन होय।
जोबन मलीन होय हीन होत बल है॥
हूकै जरा नेरी तकै अन्तक अहेरी आवै।
परभौ नजीक जाय नरभौ निफल है॥
मिलकै मिलापी जन पूछत कुशल मेरी।
ऐसी या दशा में मित्र! काहे की कुशल है॥

यह परिग्रह विनाशीक महा दुख का कारण है। देह अपवित्र है। ज्ञान रहित अविवेकी इस तन से अति राग करता है। यह शरीर सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र से शुद्ध होता है और मनुष्य देवादि द्वारा पूज्य होता है। जीव भोगों से तृप्त नहीं होता। ज्यों २ भोग करता है त्यों २ लालसा बढ़ती है जैसे

अग्नि में ज्या २ लकडी डालोगे त्यों २ ज्वाला बढेगी। यह जीवरूपी राजा कुबुद्धि रूपी स्त्री सहित रम है अर मृत्यु याकूँ अचानक ग्रस्या चाहे है। मनरूपी हस्ती, रूप वन विषै क्रीडा करै है। ज्ञानरूप अंकुश तें याहि वस कर, वैराग्यरूपी गज थंभ सूँ विवेकी बांधे हैं। चित्त के मेरे चंचलता धरे है। तातैं चित्त कूँ वासि करना योग्य है। चित्त कू वसि करना स्वाध्याय से होता है?

विचारनीय बात है कि मनुष्य पर्याय अति दुर्लभ है इसी से आत्म कल्याण होसकता है आज हमारे पास सब प्रकार की सामग्री मौजूद है धर्म अच्छी तरह साधना चाहिये वरना एक दिन ऐसा होगा कि न हमारे पास वह सामग्री रहेगी और सब कुटुम्बी व मित्रजन न्यारे २ होजावेंगे। इस्से ससार से विरक्त हो धर्म साधन करना चाहिये। यह मनुष्य पर्याय रूपी रत्न को ससार रूपी समुद्र में मत फेंको। हमको स्वाध्याय करना चाहिये। श्री आदि पुराणजी में लिखा है।

(श्लोक १९८ से २०० तक पर्व १९)

ए बाह्याभ्यंतर बारह प्रकार के तप तिन विषै स्वाध्याय समान तप न पूर्वे भया न अब है न आगे होयगा। स्वाध्याय विषै राति निश्चल संजमी जितेन्द्री होय है। स्वाध्याय करि बुद्धिमान विनय करि मंडित समाधान रूप होय है।

न स्वाध्यायात्परं तपः।

अर्थात स्वाध्याय के समान कोई तप नहीं है। जबतक स्वाध्याय होती रहती है पुण्य का संचय और पाप का क्षय होता रहता है। अक्सर देखा जाता है कि हमारे बहुत से

भाई कुछ थोड़ासा जानकर स्वाध्याय छोड़ देते हैं और कहते हैं जो कुछ जानना था जान लिया अब स्वाध्याय की जरूरत नहीं। हम पंडित भूदरदासजी की निम्न लिखित चौपाई का स्मरण उन्हें दिलाते हैं—

जानन जोग लियौ हम जान। तहा हमारे दिढ़ सरधान ॥
यही सही समकित को अङ्ग। काहे करें और श्रुत सङ्ग ॥
जो तुम नीकें लीनों जान। तामें भी है बहुत विनान ॥
तातें सदा उद्यमी रहो। ज्ञान गुमान भूलि जिन गहो ॥

प्रिय पाठको! यदि आप नित्य दिन रात्रि यानी २४ घंटे के अन्दर आधा पत्र भी पढ़लेंगे तो सालभर में २०० पत्र यानी एक छोटे ग्रंथ की स्वाध्याय हो सक्ती है जैसे एक २ बूंद करके तालाब भरजाता है। स्वाध्याय से अचिंत्य लाभ है-नुकसान किसी प्रकार का नहीं है। हम आपके खाने पीने में कोई बाधा नहीं डालते हैं।

भगवत प्रार्थना।

आगम अभ्यास होहु सेवा सर्वज्ञ, तेरी।
सङ्गति सदीव मिलौ साधरमी जनकी ॥
सन्तन के गुन को बखान यह बान परो।
मेटो टेव देव ! पर औगुन कथन की ॥
सबही सों ऐन सुख दैन मुख बैन भाखों।
भावना त्रिकाल राखों आतमीक धनकी ॥
जौलों कर्म काट खोलौं मोक्षके कपाट तौलौं।
ये ही बात हूजौ प्रभु पूजौ आस मनकी ॥

शरीर में क्षुधा भोगादि रोग हैं। एक दर्फे तृप्त होने से शान्ति नहीं होती है। परन्तु मनुष्य पर्याय उच्च कुल, श्रावक कुल, साधर्मीयों की सत सङ्गत मुश्किल है। जिनवाणी मात नय से वर्णन होती है। जैसे दूध बिलोने वाली एक हाथकी रस्सी ढीली करती है मगर छोड़ती नहीं फिर दूसरे हाथ की रस्सी ढीली करती है इस प्रकार की क्रिया से मक्खन निकाल लेती है। उसी प्रकार स्याद्वादी सम्यग्दर्शन से तत्वस्वरूप को अपनी ओर खींचता है, सम्यग्ज्ञान से पदार्थ के भाव को ग्रहण करता है और दर्शनज्ञानकी आचारण क्रियासे, सम्यगचारित्र से परमात्म पद के प्राप्ति की सिद्धि करता है। भावार्थ जिस नय के कथन का प्रयोजन द्रव्य से हो उसे द्रव्यार्थिक और जिसका प्रयोजन पर्याय से ही हो उसे पर्यायार्थिक नय कहते हैं इन दोनों नयों से ही उसे वस्तु के यथार्थ स्वरूप का साधन होता है।

नय वस्तु के एक देश का जानने वाले ज्ञानको कहते हैं मुख्य नय, दो प्रकार के हैं। निश्चय और व्यवहार। अथवा उपनय वस्तु के असली अंश को ग्रहण करना उसे निश्चय नय कहते हैं। जैसे मिट्टी के घड़े को मिट्टी का घड़ा कहना। किसी निमित के वश से एक पदार्थ को दूसरे पदार्थ रूप जानने वाले ज्ञान को व्यवहार नय कहते हैं। जैसे मिट्टीके घड़े में घी के रहने से घी का घडा कहना। निश्चय नय के दो भेद द्रव्यार्थिक दूसरा पर्यायार्थिक। जो द्रव्य अर्थात सामान्य को ग्रहण करे उसे द्रव्यार्थिक नय कहते हैं। जो विशेष को (गुण अथवा पर्याय को) विषय करे उसे पर्यायार्थिकनय कहते हैं। द्रव्यार्थिक नय के तीन भेद—नैगम संग्रह व्यवहार। पर्यायार्थिक नय के चार भेद—ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, और एवंभूत। विशेष हाल जैन

के कारण मनुष्य जन्म व्यर्थ व्यतीत हो रहा है" "गया वक्त हाथ आता नहीं" आत्माका हित करने के लिये जिनवाणी महिमा करने को कुछ प्रतिज्ञा (यम = यावज्जीवन, नेम = कुछ काल पर्यंत) करो सदैव ज्ञानोपयोग रहने से नाश कर प्रकृति का बंध होता है।

प्रमादी रहनेसे बड़ा हानि होती है प्रमाद से छः प्रकृतियों का अर्थात अस्थिर, अशुभ, असाता वेदनीय, अयश कीर्ति, अरति और शोक का बंध होता है पस प्रमाद और कुसंगति तत्काल दूर कर विनयी हो धर्म धारण करना योग्य है बालकों स्त्रीयों को विद्या अभ्यास करना जरूरी है। (समाप्त) श्री जिनसेनाचार्य ने श्री पद्मपुराण में कहा हैकि जो कुछ नेम या यम जीव प्राप्त कर लेता है वही उसका सच्चा रत्न है। स्या याय के प्रसाद से असंख्य जीव कुगति से बच गये हैं यह बात शास्त्रों से भली भांति जानी जा सक्ती है:—

नेम या यम करने से जीव स्वाध्याय से नहीं छूटता है क्या कि नेम या यम भङ्ग करने का बड़ा पाप है इस पाप को थोड़ा लादि न भी बहुत बुरा समझा है इस लिए कोई भी यम व नेम करते समय सब बातों का विचार करले और "सूतक पातक हारी बीमारी सफर इत्यदि (स्त्रियों को इसके अतिरिक्त स्त्रीधर्म जापा वगैरहः) में छूट रखलेना उचित है। विपति व कठिनसमय में सावधान रहना यही पुरुषार्थ है और जाच का भी वही समय है।

सत्य जानिए मेरा लेख ऐसे है जैसे बालक चंद्रमा को पकड़ा चाहे परन्तु मैं भक्ति वश जिनवाणी की स्तुति व गुणानुवाद करू हूं।

हम को नेत्रों से दर्शन, मुख से जिनेन्द्र गुणानुवाद स्वाध्याय करना, कानों से धर्मध्वनि सुनना हाथों से धर्म कार्य दान करना; मन से धर्म भावना करना चाहिए। मेरे अन्तरङ्ग यह मङ्गलीक भावना दृढ़ रहे और जीवमात्र दुख से छूटें और सुख प्राप्त करें।

महिमा जिनवर वचन की, नहीं वचन वल होय ।
भुजवल सों सागर अगम, तिरे न तीरहि कोय ॥
इस असार संसार में, और न सरन उपाय ।
जन्म जन्म हूजो हमे जिनवर धर्म सहाय ॥

॥ भजन ॥

(१)

करो कल्याण आतम का भरोसा है नहीं दम का ।
ए काया कांच की शीशी, फूल मत देख कर इसको,
छिनक में फूट जावेगी बबूला जैसे शबनम का ॥करो०॥
ए धन दौलत मकां मँदिर जो तू अपने बताता है,
नहीं हरगिज कभी तेरे छोड़, जँजाल सब गम का ॥ करो० ॥
सुजन सुत नार पितु मादर सभी परिवार अरु बिरादर,
पड़े सब देखने रहेंगे कूच होगा जमीं दमका ॥ करो० ॥
बड़ी शरबी ए जग रूपी फँसे मत जान कर इन में,
कहे चुन्नी समझ मन में मिताया ग्यान का चमका ॥करो०॥

* सम्पूर्ण *

(२)

पद ॥ परदा पड़ा है मोह का आता नजर नही ।
चेतन मेरा सरूप है तुझ को खबर नहीं ॥ १ ॥ परदा०
चारों गतिमें मारा फिरे बजार रातदिन, आपमेंआप आपको
लखता मगर नहीं ॥ २ ॥ परदा पड़ा है मोह का०
तज मन विकार धारले अनुभव, सुचेत हो। निज
पर विचार, देख जगत तेरा घर नहीं ॥ परदा पड़ा० ॥
तू अब स्वरूप शिव स्वरूप ज्ञानरूप है। सिद्धियों के

मन में होतो कदर नही। परदा पड़ा है मोह का० ॥ चाहे तो कर्म काट तू परमात्मा बन, अफसोस है कि इस पर भी करता नजर नहीं ॥ परदा पड़ा है मोह का०॥ निज शक्ति को पहिचान समझ तू न्यामत। आलस में पड़ रहन न होना गुजर नहीं॥ परदा पड़ा है मोह का० ॥

जिन सेवक—

॥ संयम ॥

पाँचों इन्द्रीया और छटे मन का दमन करना, वैराग्य भावना, बारह भावनाओं का चिन्तवन करना, संसारी कार्यों में विरक्तता उपजावना सो संयम है।

बारह भावना (भैयालाल कृत)

चौपाई

पञ्च परम गुरु वंदन करू। मन वच भाव सहित उर धरू ॥
बारह भावन पावन जान। भाऊं आतम गुण पहिचान ॥१॥
थिर नहीं दीखत नयनों वस्त। देहादिक अरु रूप समस्त॥
थिर बिन नेह कौन से करू। अथिर देख ममता परिहरू ॥२॥
अशरण तोहि शरण नही कोय। तीन लोक में दृग धर जोय॥
कोई न तेरा राखन हार। कर्मन वश चेतन निरधार ॥३॥
अरु संसार भावना येह। पर द्रव्यन सौं कैसो नेह॥
तू चेतन, ये जड सरवंग। ताते तजो परायो संग ॥४॥
जीव अकेला फिरे त्रिकाल। ऊरध मध्य भवन पाताल ॥
दूजा कोइ न तेरे साथ। सदा अकेला भ्रमे अनाथ॥५॥
भिन्न सदा पुद्गल से रहे। भर्म बुद्धि से जड़ता गहे॥
वे रूपी पुद्गल के खंद। तू चिनमूरति सदा अबंध ॥६॥
अशुचि देख देहादिक अङ्ग। कौन कुवस्तु लगी तो सङ्ग॥
अस्थि चाम मेदादिक गेह। मल मूत्रनि लख तजो सनेह॥७॥
आस्रव पर सौं कीजे प्रीति। ताते बंध पड़े विपरीत ॥
पुद्गल तोहि अपन पौ नाहिं। तू चेतन, ये जड सब आहि ॥८॥

सम्बर पर को रोकन भाव । सुख होवे को यही उपाव ॥
आवें नहीं नए जहाँ कर्म । पिछले रुक प्रगटे निज धर्म ॥९॥
थिति पूर्ण ह्वै खिरखिर जाय । निर्जर भाव अधिक अधिकाय ॥
निर्मल होय चिदानन्द आप । मिटे सहज पर सङ्ग मिलाप ॥१०॥
लोक माँहि मेरो कुछ नाहिं । लोक अन्य तू अन्य लखाहि ॥
यह सब षट द्रव्यन को धाम ॥ तू चिन्मूरति आतमराम ॥११॥
दुर्लभ पर को रोकन भाव । सो तो दुर्लभ है सुन राव ॥
जो तेरे है ज्ञान अनंत ॥ सो नहीं दुर्लभ सुनो महंत ॥१२॥
धर्म स्वभाव आप ही जान । आप स्वभाव धर्म सोई मान ॥
जब वह धर्म प्रगट तोहि होइ । तब परमातम पद लख सोई ॥१३॥
येही बारह भावन सार । तीर्थंकर भावें निर्धार ॥
होय विराग महाव्रत लेय । तब भव भ्रमण जलांजलि देय ॥१४॥
भैया भावो भाव अनूप । भावत होय तुरत शिव भूप ॥
सुख अनन्त बिलसो निशि दीश । इम भाषो स्वामी जगदीश॥१५॥

* दोहा *

प्रथम अथिर अशरण जगत, एक अन्य अशुचान ॥
आश्रव सम्बर निर्जरा, लोक बोध दुलभान । ॥१६॥

॥ तप ॥

निश्चय से देखिए तो सर्व गति में दुख है । तपनि के भेद बहुत हैं सो शास्त्रजी से मालुम करना । तप दो प्रकार के होते हैं एक अंतरङ्ग दूसरा बहिरङ्ग । सर्व देश मुनि के और एक देश श्रावक के होते हैं । कुछ संक्षेप में मुनि के तपनि का वर्णन श्री गुरु के स्वरूप में आया है । तप और नेम में कुछ भेद नहीं है । जैसे किसान खेत की बाड़ से, होजवान डाट से होज के पानी की, रक्षा करता है । इसी तरह मुनि श्रावक अपने धर्म की यम नेम रूपी बाढ़ डाट लगाकर, रक्षा करते हैं और तप कर कर्मों की निर्जरा करते हैं । उनका रत्न है । लौकिक कार्य भी नियम से होते देखिए कार्य को अवश्य यम नेम चाहिए ।

जितने दम व नेम कीये जावें सो सब तप के भेद हैं । श्रावकों को १७ नियम निःस्य करना चाहिए—१ भोजन २ षटरस (दूध दही तरा घी मीठा मोन) ३ पान (पीने) की वस्तु ४ कुकुमादि विलेपन सुगंध तेल लेपादि ५ पुष्प—फूल ६ तांबुल—पान सुपारी आदि ७ गीत—ससारी गान नाटकादि ८ नृत्य—संसारी नृत्य ९ ब्रह्मचर्य—काम सेवन १० स्नान ११ वस्त्र १२ भूषण १३ वाहन हाथी घोडा बैल आदि १४ शयन—शय्यादि १५ आसन चौकी कुरसी फर्स आदि १६ सचित (हरी का प्रमाण) १७ अन्य वस्तु (दिशाओं का भ्रमण)—यह बारहवां नियम ग्यारहवां स्थूल भोगोपभोग परिमाणव्रत ऊंची प्रतिमा धारी श्रावकों को करना चाहिए । इन जैनियों को ऐसे हर समय याद रखने योग्य है।

सत्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा परत्वम् ।
माध्यस्थ भाव विपरीत वृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव ॥

O Lord ? make myself such that I may have love for all beings, pleasure at the sight of learned men unstinted sympathy for those in trouble, and tolerauce towards those who are perverse y inclined

---

नोट—मधस्थ भावना उस भाव को कहते हैं जैसे एक अनजान पुरुष हो तिस से न तो मित्रता है न शत्रुता है—

स्वाध्याय करना सो अंतरंग तप है । चिदानंद चैतन्य के गुण अनंत उर धारि—क्रोधादि को इस प्रकार जीत दश धर्म उपार्जन करे।

क्रोध	का	अभाव	क्षमा	से	
मान	"	"	मार्दव*	"	*मान कषाय रहित
माया	"	"	आर्जव+	"	+कपट छल रहित
असत्य	"	"	सत्य	"	

लोभ का अभाव		शौच* „	*पवित्रता उज्जलता
कषायन „			
५ मन अहिंसादि	„	सजम +	+एक देश सकल देश
इच्छा „	„	तप „	
पर म ममता „	„	त्याग „	
परिग्रह त्याग गृहस्थ की भावना	„ „	आकिंचन „	
वेदन (स्त्री पुरुष नपुंसक,) का अभाव यानी आत्म स्वरूप म प्रवृति	„ „	ब्रह्मचर्य „	

दान

दान चार प्रकार के हैं यथा आहार औषधि, शास्त्र और अभय। (उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य से कई भेद हैं)

यह नियम द्रव्य द्वारा या सामग्री से पाला जा सकता है। हमारे आचार्यों ने शास्त्र जी में हम को हमारी मासिक आमद में से चौथाई हिस्सा दान करने का उपदेश दिया है जो कोई ऐसा करे वह तो उत्कृष्ट पुरुष है बहुत से बड़े २ धर्मात्मा अपनी आमद में से आधा या ज्यादा धर्म में लगा देते हैं उनके पुण्य को केवली भगवान ही जानते हैं। जब ऐसे भाव या निमित्त न हो तो भी शक्ति को न छिपा कर महावारी मुकर्रर करे या रुपये पीछे कुछ बांधकर दान द्रव्य एकत्र करना चाहिए। और जहां जहां उचित स्थानों में जरूरत हो लगाता रहे। इस तरह पर हम एक समय म बड़ी तादाद भी लगा सकेंगे और हमको कोई कठिनता मालुम न होगी। पारमार्थिक लाभ के अतिरिक्त लौकिक लाभ जैसे दानवीर, सेठ साहूकार धर्मात्मा कुल भूषणादि पद भी लग जाते हैं जिसका यास्तव में सुधरा उसका

पारमार्थिक भी जरूर सुधरेगा उन्हीं का जन्म और द्रव्य सफल है। परभव में द्रव्य लेजाने का पक्का यह 'दान' सुगम उपाय है। हमको न्याय पूरक द्रव्य कमाना और खर्च करना चाहिए। लक्ष्मी रूपी द्रव्य में तीव्रराग होने से तिर्यंच गति का बंध पड़ना संभव है। आपने उदाहरण भी बहुत से सुने होंगे कि "फलाने के पास बहुत द्रव्य था मरकर सर्प हुआ"। यदि आप द्रव्य ही साथ में रखना चाहते हैं तो धर्म में लगाइए। निदान नहीं करना यानी मेरा फलाना काम सिद्ध हो तो यह कभी ऐसी कल्पना नहीं करनी।

हर शहर में भाइयों को अभयदान का निमित्त बनाना चाहिए।

यद्यपि साधारण तौर पर उपर्युक्त चार दान हैं परंतु श्री आदि पुराणजी पर्व ३७ में और रूप में चार दान इस प्रकार कहे हैं सोई कोई विरोध न करना करुणादान, सीताजी के किमिच्छादान का कथन समाधि मरण पाठ से भली भांति जाना जा सक्ता है।

दयादान, पात्रदान, समदान, अन्वयदान।

दयादान—दया सहित जीवनि के समूह विषै अनुग्रह करना, मन वचन काय की शुद्धता करि सकल का उपकार करना काहू कू भय न उपजावना, दुखित भूखित जीवनि कू पोषना इसे दयादत्ति भी कहते हैं। (करुणा दान भी यही है)

पात्रदान—महा तपोधन महामुनि की अर्चा करनी, पड़गाहनादि नवधाभक्ति करि तिनि कू आहारादिक दान। अजिका

तथा उत्कृष्ट श्रावक दसमी ग्यारमी प्रतिमा का धारक तिन कूं विनय भक्ति करि अन्न वस्त्र देने सो पात्रदत्ति है। (पद्मपुराण में भी यही कहा है)

समदान—गोष्ठी मंत्रयंत्रादि करि जे आप समान, अणुव्रती संसार सागर के तारक श्रावक तिनि कू आहारदान, औषधदान, शास्त्रदान, अभैदान तथा भूमिदान, सुवर्णदान, रत्नादिक देना सो समदान—यह समदान मध्यम पात्र जे व्रती श्रावक तिन कूं श्रद्धा पूर्वक विनय से देना।

अन्वयदान—अपने वंश की रक्षा के अर्थ धर्मात्मा विवेकी जो पुत्र ताकू घर का सकल द्रव्य देना, और धर्म का उपदेश देना। अर सकल कुटम्ब का बोझ देना अर आप सकल सूं निवर्ति होय मुनिव्रत लेने अथवा उत्कृष्ट श्रावक के व्रत धारने। (सर्वदान भी यही है)

नोट १—मुनियों के वास्ते शहर के बाहर जङ्गलों में मठ बनवाना वस्तिका बनवा देना सो वस्तिका दान चौथे शिक्षाव्रत में कहा है।

नोट २—जब कहीं गुफा, वसतिका इत्यादि में मुनि ठहरते हैं तब वे इस प्रकार कहते हैं 'जो स्थान के निवासी हो तुम्हारी इच्छा करि के यहां हम तिष्ठे हैं'। जाते समय इस प्रकार कहते हैं—"जो स्थान के स्वामी हो, हम तुम्हारे स्थान में इतने काल तिष्ठे अब गमन करे हैं"।

नोट ३—जैन बाल गुटका दूसरे भाग में दान के चार भेद करुणादान, पात्रदान, समदान, और सर्वदान और लिखे हैं। जिसका तात्पर्य ऊपर के चार दान से है, तातें पाठकगण कोई शंका न करें।

स्त्री समाज से प्रार्थना

प्रिय माताओं व बहिनो ?

मैं अपने इष्टदेव का स्मरण कर आपके सन्मुख कुछ लेख द्वारा प्रकाश करता हूं कि यद्यपि हर स्थान पर स्त्रियां धर्म साधन करती हैं तथापि जैसा करना उचित है वैसा कम नजर आता है इसलिये मेरा विचार यह है कि आप बहिनों की सेवा करूं। मुझमें ज्यादा ज्ञान नहीं है परन्तु जिन शासन भक्ति रस कार्य करने की उत्कण्ठा हुई है। सन्सार में उपकार और अपकार दो ही है। उपकार नाम भलाई और अपकार नाम बुराई। देखने में अक्षरों का थोड़ासा ही अन्तर है। जो अपना और दूसरों का भला करते हैं उन्हीं का जीवन सफल है। इस मनुष्य पर्यायको देव भी तरसते हैं।

जैन समाज के आचार सुधार का एक स्त्री समाज भी निमित्त है जैसे गाड़ी दो पहियों के बिना नहीं चल सकती है।

हम आठ चौदसको सत्रजी भक्तामरजी सुना करती हैं यह ढर्रा जगत प्रसिद्ध है। मगर हम बहुतसी बहिनें यह भी नहीं जानती हैं कि इनमें क्या लिखा है और यदि नियम से शास्त्र स्वाध्याय करें तथा सुनें तो हमारे आचार विचार श्रेष्ठ होसकते हैं। शीलवन्ती सीता अञ्जनाकी सी पदवी धारण हम कर सकती हैं। वे भी स्त्रियां हमें सरीखी थीं। मगर शास्त्रज्ञान था इस सबब से धर्म में हर प्रकार से दृढ़ थीं और यही कारण है कि वे मोक्ष प्राप्त करेंगी और सन्सारमें उनका नाम विख्यात है।

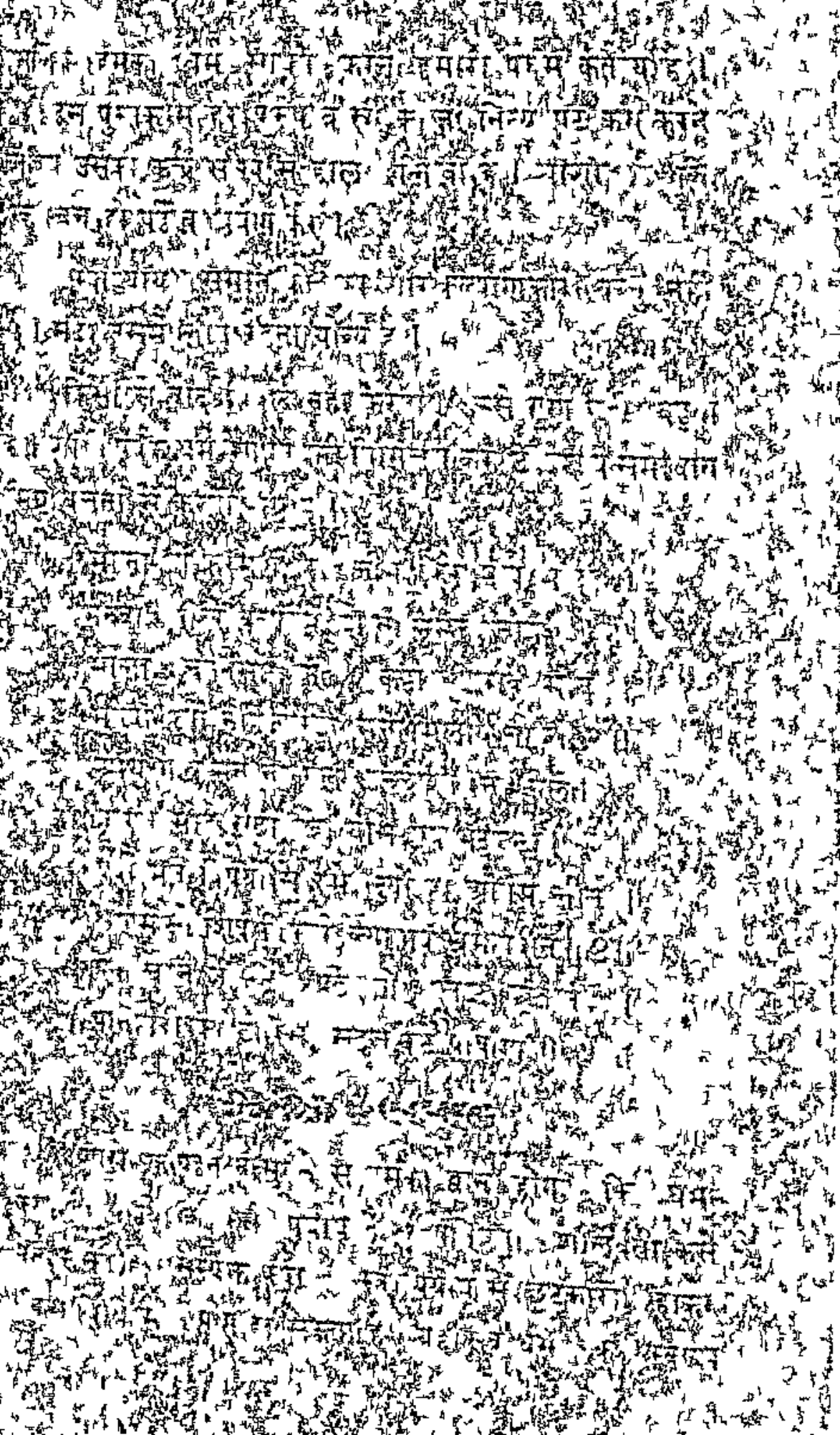

अवश्य जानने योग्य है। सूत्रजी भक्तामरजी का मैं निषेध नहीं करती हूं मैं भी पाठ करती हूं मगर उसके अर्थ समझने की भी अति आवश्यकता है क्यों कि समझने में फल श्रेष्ठ और पूर्ण मिलता है। हमारी माइयों व पिताओं से प्रार्थना है कि स्त्रियों को भी अवश्य धर्म लाभ पहुंचावें। विद्याभ्यास करावें। ज्ञान से लौकिक व पारमार्थिक सुख प्राप्त होता है। गृह में अज्ञानता के कारण जो कुछ भी त्रुटियां हों वह शास्त्र ज्ञान द्वारा दूर हो सकती है। धर्म नाम आत्मा के गुणों का है। ... यह जीव कर्मों से ऐसा लिप्त है जैसे सोना—पत्थर या तिल—तेल। इस जीव का केवल ज्ञान, कषायादि जो कर्म उनकर आच्छादित है, इन दोषों को यथोक्त रीति से दूर करने पर, वह निर्मल चिदानन्द, ज्ञानमई शिवस्वरूपी आत्मा सूर्य समान प्रगट होजाता है।

२—स्त्रीयां गृह में अथवा वसतिका में रहकर, धर्म साधन कर सकती हैं। आज कल इस पंचम काल में आर्जिका कम दृष्टि पड़ता है, इस लिए अपने गृह में ही बहुत कुछ धर्म साधन हो सक्ता है। इस पुस्तक के पढ़ने से भी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त होगा। भगवती आराधना श्लोक ८२ में लिखा है कि स्त्रीयों के महाव्रत भी होसक्त है।

३ स्त्रियों का महाव्रत।

१६ हस्त प्रमाण १ सफेद वस्त्र अल्प मोल, पग की एडी सू लेय मस्तक पर्यन्त सर्व अङ्ग कू आच्छादन करि और मयूरपिच्छिका धारण करती, ईर्या पथ करती, लज्जा है प्रधान जाके, सो पुरुष मात्र में दृष्टि नहीं धारती, पुरुषन ते वचनालाप नहीं करती, ग्राम नगर के अति नजीक हू नहीं अति दूर हू नहीं, ऐसी वसतिका में अन्य आर्यिकानि के संघ में वसती एक बार वैठ, मौन सहित

मैथिलीशरणी (२८ ग्राम प्रथ तगरक पैसे १००० चावल के बराबर) एक पात्र। बिना निरन्तुष भोग है, परिमित नहीं भरणी करती। अनुसार से गन्धव रहने रहनो—स्त्री पर्याय में नमिन को मैं पर्याय है—उपचार से मनुष्यादि निरवद्य व अहंकार हो है, पांच गुण स्थान हैं। इनमें जो गृह में देख कर अनुसार शराब, कर, शील, नियम, सन्तोष क्षमादि रूप सहन पर धारि व अनुराग है, वो मनुष्य न दोऊ हो हाय।

८—जो बैठना में "स्त्री शिक्षा" पर प्रस्ताव हुआ था, सो प्रकाश करते हैं—

स्त्री-शिक्षा।

इटली में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा के २३ व सन् १९२३ वीर सं० २४४९ के अधिवेशन में सभापति, श्रीमान सेठ रावजी सखाराम दोशी (सोलापुर) के व्याख्यान से उद्धृत

स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में किसी का मतभेद नहीं है परन्तु स्त्रियों को शिक्षा किस तरह की देनी चाहिए उसमें मतभेद रहता है।

मेरी समझ में स्त्री को धर्मशास्त्र का अवश्य ज्ञान होना चाहिए।

पण्डित आशाधरजी अपने सागार धर्मामृत में लिखते हैं कि

व्युत्पादयेत तरां धर्मे पत्नीं प्रेम परं नयन्।
सा हि मुग्धा विरुद्धा वा धर्मात् भ्रंशयेत नरम्॥

अर्थ—अपनी पत्नी को धर्म में अच्छी तरह से व्युत्पन्न करना चाहिये। क्योंकि यदि वह धर्म से अनभिज्ञ हो या प्रतिकूल होगी तो अपने पति धार्मिक को धर्म से भ्रष्ट कर देती है।

यदि स्त्रियों को धार्मिक शिक्षा अवश्य देनी चाहिये और उसके साथ **लौकिक शिक्षा धर्म से अविरुद्ध हो** वह देनी

चाहिए। आहार शुद्धि का ज्ञान स्त्रियों को अवश्य चाहिए, सीना पिरोनेका ज्ञान, गृह व्यवस्थाका ज्ञान यह अवश्य चाहिए। कई विद्वानोंका मत ऐसा है कि पुरुष और स्त्रीकी शिक्षा एकसी होनी चाहिए। स्त्री पुरुष के हक्क समान हैं यह बात धर्म से विरुद्ध जाती है। देखो श्री आदिनाथ भगवान ने अपनी पुत्री ब्राह्मी और सुंदरी को अक्षरदान का आरम्भ कर दिया उस समय उन्होंने जो उपदेश दिया उसका महत्व देखना है।

इदं वपुर्वयश्चेदं इदं शीलमनीदृशम्।
विद्यया चेद्विभूष्येत सफलं जन्म वामिदम्॥
विद्यावान् पुरुषो लोके सम्मतिं याति कोविदैः।
नारी च तद्वती धत्ते स्त्रीसृष्टेरग्रिमं पदम्॥

अर्थ—यह आपका शरीर वय और शील यदि विद्यासे भूषित होजायगा तो आपका जन्म सफल होगा क्योंकि विद्वान पुरुष लोगों में विद्वानों से श्रेष्ठताको प्राप्त करलेता है, ऐसा ही विदुषी स्त्री सृष्टि में श्रेष्ठ पदको धारण करलेती है। प्यारे भाइयों! श्री आदिनाथ भगवान के उपदेश को अच्छी तरह देखो और उन्हीं आदर्श के माफिक अपनी पुत्रियों को विद्या पढाना चाहिए, पुरुष सृष्टि और स्त्री सृष्टि जुदी मानी गई है दोनों की पढाई का मन्तव्य भी जुदा चाहिए अपने को स्त्रियों के लायक पाठ्य पुस्तकें भी अच्छी बनवानी चाहिये जिसमे स्त्रियों का धर्म अच्छी तरह बताया हो।

५—हे बहिनो! जो कुछ मुझ से अशुद्धि या अनुचित कहा गया हो उसे आप पण्डिता क्षमा करें।

जिन सेविका—

अनारदेवी, धर्मपत्नी श्रीमान लाला द्वारकाप्रसाद जैन, C K

हाथरस निवासी व इस पुस्तक की प्रकाशक।

॥ धर्म-चर्चायें ॥

१—यदि स्वाध्याय में कोई शङ्का उपजे तो स्थानीय धर्मात्मा भाइयों से समाधान करलेंय अथवा डाक द्वारा किसी विद्वान से।

जो चरचा जिन ते नहि बढ़ै, सो मत जैन सूत्र सों कढ़ै।
अथवा जो जिन मरमी लोग, तिनें पूछि लीजै यह जोग॥
इतने में मर्म न लहिजाय, सो सब केवल माहि समाइ।
यों निश्चय कीजै निजभाव, चरचा में हठ को नाहिं दाव॥

२—जैन पुत्रों को स्थानीय भाइयों से ज्यादा गुणी होने चाहिए। पञ्च शब्द से यह अभिप्राय है कि वे न्याय पूर्वक सबलोग धार्मिक कार्य करेंगे तथा समाज को चलावेंगे। समाज पर उनको सदैव गम्भीर और क्षमा भाव रखने योग्य है। पण्डित भूदरदास जी कहते हैं—

जैन धरम को मरम लौं, मरम मान कषाय।
यह अद्भुत अचरज सुन्यो जल में लागी लाइ॥
जैन धर्म लहि मद बढ़ै यह कोई न मिलै है कोई।
अमृत पान विष परिणवै नाहि न आपुध होई॥
नीति सिंहासन बैठि वीर, मत्रि अनड़ात, राषि हजीर।
जोग, प्रजा, रैहत, विचार, जस नीति नृपनि व्योहार॥

३—परस्पर जैनी (श्रावक तथा श्राविका) को वात्सल्य अङ्ग धारण करने का विचार रखना परमावश्यक है। यानी एक दूसरे को देखकर अर्थात् अधिक से मिलने पर प्रसन्न होना, कुशल-क्षेम पूछना तथा धर्म चर्चा करना, गाय बछड़े जैसी प्रीति होना इत्यादि—"जिनेन्द्र प्रवचन" में धर्म भाव ही वात्सल्य अङ्ग कहलाता है शक्ति माफिक धर्म द्वारा स्थापना और सुश्रूषा करना।

४—हमको आपस में जुहार शब्द इस्तेमाल करना चाहिए। इस शब्द का अ

श्लोक

जुगादि वृषभोदेव हारक सर्व संकटान।
रक्षक सर्व प्राणीनां, नमस्ते जुहार उच्यते॥

अर्थ—जुहार शब्द में तीन अक्षर हैं ज, हा और र। ज से अर्थ है कि जुग के आदि में होने वाले श्री देवाधिदेव ऋषभदेव भगवान—और ह से हरने वाले सर्व संकटों के और र, से रक्षा करने वाले कुल प्राणियों के। उनको हमारा तुम्हारा दोनों का नमस्कार हो और वह कल्याण कर्ता परमपूज्य हमारा तुम्हारा दोनों का कल्याण करें।

५—कृष्ण पक्ष की पन्द्रस को सुबह ही सोता हुआ दाहिने स्वर में जागे और शुक्ल पक्ष की पड़वा को सुबह बाएं स्वर में जागे तो शरीर निरोग रहे। यदि स्वर विपरीत हो तो कष्ट से बढ़ते। भोजन के पश्चात् पानी से हाथ धोकर हथेलियों को रगड़ नेत्रों से मल लें तो नेत्र रोग न होगा। यह धर्म साधन हेतु लिखा है।

६—प्रत्येक नगर में दि० जैन वाचनालय होना जरूरी है। जहां पर सर्व जैन अजैन भाई आकर पढ़ें और चर्चा किया करें इत्यादि। काम वगैरह किसी प्रकार का नहीं होना चाहिए। और हर स्थान पर मासिक औषधालय बड़नगर की शाखा भी रखनी लाभदायक है।

७—यदि आप किसी को जैन धर्म का अमूल्य रत्न अमृत पान करा देंगे तो यकीन कीजिए कि वह आपका सदा आभारी और उत्कृष्ट मित्र जन्म भर में होगा।

८ अज्ञान तिमिर व्याप्तिमपाकृत्य यथायथम्।
जिन शासन माहात्म्य प्रकाश स्यात्प्रभावना॥

स्वामी समन्तभद्राचार्य ने कहा है कि अज्ञान के अंधकार को नष्ट करके जैन धर्म के बड़प्पन का प्रकाश करना ही सच्ची प्रभावना है। इस लिए प्रत्येक स्त्री पुरुष को चाहिए कि जैन ग्रन्थों को स्वयं पढ़ें, दूसरों से पढ़ने के लिए कहें। और निर्धनों

को शास्त्रदा करके उनको ज्ञानी बनावें। इस काम में इस से बढ़कर और कोई पुण्य कार्य नहीं। धनी धर्मात्माओं को ग्रंथ मुफ्त में बाँटकर अपने धन को सफल करना चाहिए।

९—किसी भी धर्म शास्त्रों व पुस्तकों के पत्र, थूक की नमी से, नहीं पलटने चाहिए। और विनय से रखना चाहिए।

१०— धर्म साधन व स्वाध्याय समय अधोअङ्ग नहीं खुजाना चाहिए।

११— किसी से वाद विवाद करने का उद्देश्य जैनियों को कदापि न करना चाहिए। प्रश्न पर मृदु वचन से समाधान कराना व कर देना योग्य है।

१२—भारतवर्षीय दिगम्बर सस्थाओं से निवेदन है कि जो जो पुस्तकें उनके यहां से बिना मूल्य वितरण हेतु छपी हों सो एक २ प्रति मुझे अवश्य भेजने की कृपा करें।

१३—बहुतों का ख्याल है कि छपे ग्रंथ पुस्तकादि से अविनय होती है इस लिए हम उनको महण नहीं करते सो ऐसे भाइयों से नम्र प्रार्थना है कि—विनय करना, न करना, हमारा ही कर्तव्य है। लाभ नुकसान सवत्र विचारा जाता है और विचार णीय है। हमको छपे ग्रंथों की विनय हस्त लिखित ग्रंथों के माफिक करनी चाहिए। क्यों कि ज्ञानावर्णी कर्मों का आस्रव, अविनय से होता है। हस्त लिखित शास्त्रों में छपे ग्रंथों का निषेध हमारे देखने में आया नहीं।

१४—प्रगट हो कि २४ तीर्थंकर भगवान धर्म चलाने वाले होते हैं। उनके वर्ण इस प्रकार हैं—

आदिनाथ,	अजितनाथ,	संभवनाथ,	अभिनंदनाथ,	सुमतिनाथ	
१	२	३	४	५	
शीतलनाथ	श्रेयांसनाथ	विमलनाथ	अनंतनाथ	धर्मनाथ	
१०	११	१३	१४	१५	
शांतिनाथ	कुन्थनाथ	अरहनाथ	मल्लनाथ	नमिनाथ	
१६	१७	१८	१९	२१	

इन १६ तीर्थंकरों का सुवर्ण

महावीर		
२४		
पद्मप्रभू	वासपूज्य	इन का लाल
६	१२	
सुपार्श्वनाथ	पारसनाथ	„ „ हरित
७	२३	
चन्द्रप्रभू	पुष्पदन्त	„ „ श्वेत
८	९	
मुनिसुव्रतनाथ	नेमनाथ	„ „ श्याम
२०	२२	

यह कथन ध्यानीय है कि अर्हन भगवान के शरीर का वर्ण सुवर्ण, लाल, हरित, श्वेत और श्याम है तभी हमारे अजैन भाइयों को आपने कहते हुए सुना होगा, काले राम, पीले राम, हरे राम (गोरे)सफेद राम,लाल राम—विचारणीय बात है कि राम शब्द यहाँ श्री रामचन्द्रजी से मतलब नहीं है परंतु भगवान से। और श्री रामचंद्रजी से मतलब लिया जावे तो एक शरीर के इतने रङ्ग नहीं हो सकते इस लिए यह स्वयं सिद्ध हुआ कि "राम" भगवान से मतलब है श्री रामचन्द्र जी का श्वेत वर्ण था वे भी अर्हन्त भगवान होकर श्री मांगी तुङ्गी से सिद्ध हो गये हैं। देखो श्री पद्मपुराण (जैन रामायण). जैनी लोग उनको भी पूजा वंदना करते हैं।

आज श्री रामचन्द्रजी और रावण की लड़ाई को, ११ लाख ८७ हजार वर्ष व्यतीत हुऐ हैं।

१५—

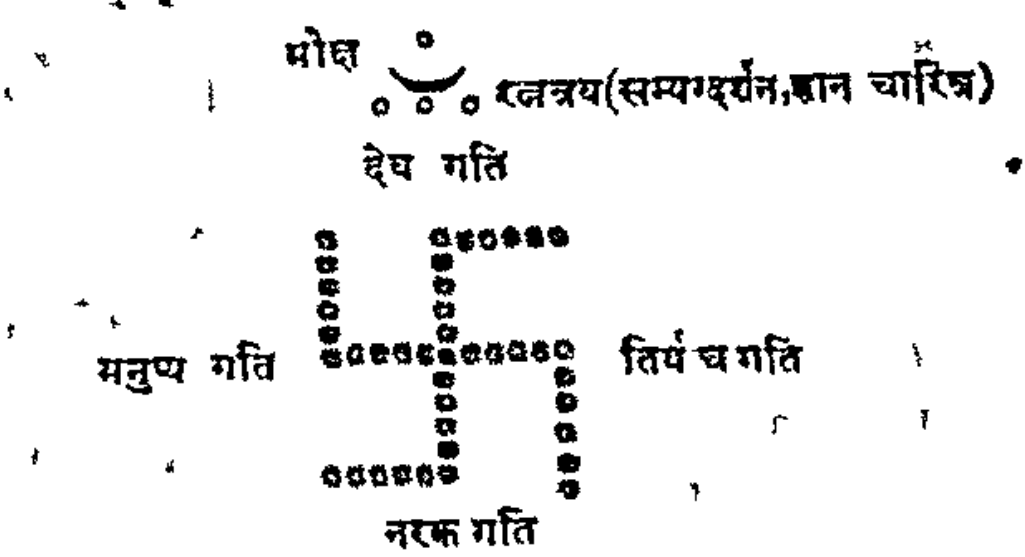

इस सांतिये से यह मतलब है कि धर्म साधन करते हुए रत्नत्रय द्वारा मोक्ष ग्रहण होता है उसी की,नित्य यादगारी में पूजन के समय सांतिया काढ़ा जाता है—चार गतियों में यह जीव किस तरह भ्रमण करता है सो जैन शास्त्रों से जानना।

१६—सम्पूर्ण तत्वों को जानने वाली तथा तीनों लोक के तिलक के समान अनंत श्री को प्राप्त होने वाले श्री सन्मति (महावीर या वर्द्धमान) जिनेन्द्र को मैं वंदना करता हूं। जो कि उज्ज्वल उपदेश के देने वाले हैं, और मोह रूप तन्द्रा के नष्ट करने वाले हैं। भावार्थ श्री दो प्रकार की होती है। एक अंतरङ्ग दूसरी बाह्य। अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतसुख अनंत वीर्य इस अनंत चतुष्टय रूप श्री को अंतरङ्ग श्री कहते हैं। और समवसरण, अष्ट * प्रातिहार्य आदि, बाह्य विभूति को बाह्य श्री कहते हैं। यह श्री तीन लोक को तिलक के समान हैं, क्यों

कि सर्वोत्कृष्ट है॥ दोनों श्री मे अंतरंग श्री प्रधान है। अंतरंग श्री में केवल ज्ञान प्रधान है। इसी लिए कहा है कि यह समस्त तत्वों को, सम्पूर्ण तत्व और उसकी भूत भविष्यत् वर्तमान समस्त पर्यायों को जानने वाली है। इस श्री को श्री सन्मति (अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी) ने प्राप्त कर लिया था, वे सर्वज्ञ थे, इस लिए उनको वन्दना की है। वे वीर भगवान केवल, सर्वज्ञ ही नहीं है, हितोपदेशी भी हैं॥ उन्होंने जो जगज्जीवों को हितका—मोक्ष का—मार्ग बताया है, वह (हितोपदेश) उज्ज्वल है। उस में प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी प्रमाण से बाधा नहीं आती। तथा वीर भगवान मोहरूप तन्द्रा के नष्ट करने वाले हैं। अर्थात वीतराग है। अत सर्व ज्ञाता हितोपदेशकता वीतरागता इन तीन असाधारण गुणों को दिखाकर इष्ट देव अन्तिम तीर्थंकर श्रीमहावीर स्वामी को जिनका कि वर्तमान में तीर्थ प्रवृत्त हो रहा है नमस्कार कर मङ्गलाचरण करते हैं।

इसी हेतु हम विचार करते हैं कि जहां तहां जो श्री इस्तैमाल की जाती है उसका उपर्युक्त अर्थ है—पत्रों में "सिद्धिश्री" का भावार्थ सिद्धों और श्री महावीर स्वामी से है।

नोट —*८ प्रातिहार्य

दोहा-तरु अशोक के निकट में, सिंहासन छविदार।
तीन छत्र शिरपर लसैं, भामडल पिछवार॥
दिव्यध्वनि मुखतैं खिरैं, पुष्प वृष्टि सुर होय।
ढारैं चौंसठि चमर यक्ष, बाजैं दुंदुभि जोय॥

१७—सूतक प्रमाण विचार ।

पीढ़ी	दिन
पीढ़ी ३ तक	१२
चौथी पीढ़ी	१०
पाँचवीं ,,	६
छठवीं ,,	४
सातवीं ,,	३
आठवीं ,,	१
नवमीं ,,	४ पहर
दशवीं ,,	स्नान मात्र

एक साल के बालक का तीन दिन ।, साधु का सूतक नहीं लगता । अपघातसे मरे उसके घर ६ महिना गाय घोड़ा आदि घरमें जन्मे, मरे तो सूतक १ दिन । बालक जन्मे उसके गृह १० दिन, प्रसूति स्थान को १ माह और गोत्रके मनुष्यों को ५ दिनका ।

१८—वैर से वैर को शांति नहीं ।

खम्मामि सव्व जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्वभूदेसु वैरं मज्झं ण केण वि ॥

प्रत्येक जीव व मनुष्यको किसी दूसरे से वैर भाव नहीं करना चाहिए इस से संसार दीर्घ होता है और वह वैर परस्पर बढ़ता जाता है यहां तक कि अनंत भवों में नहीं छूटता, पस ऐसा करने से मोक्ष मार्ग पर बोध नहीं लगता इस लिए बुद्धिमान चतुर मनुष्य व जीवों किसी से वैर नहीं करते तथा वैर का निमित्त आजाने पर, सी सूरत से उसको टाल देते हैं ।

इस शरीर में ५६८९९५८४ रोग भरे हैं जिस में नेत्र रोग सिर्फ ९६ है । इस लिए शक्ति प्रमाण हमेशा धर्म साधन करते रहो । तीर्थ यात्रादि धर्म सब तरुण अवस्था में अच्छे साधन होते हैं । न मालूम यह शरीर हम से कब छूट जाये आज

कल नाना प्रकार के रोग व प्लेगादि का अवसर चक्र फिरा करता है। पौरुष इंद्रियां थकने पर यथावत नहीं हो सकता। शुरू से धर्म साधन करते हुए नाना प्रकार के भावों का यह जीव ज्ञायक हो जाता है। तो अंत समय समाधि मरण भले प्रकार कर सकता है। समाधि मरण इस जीव ने कभी नहीं किया। इस लिए भ्रमण कर रहा है। एक दफे भी समाधि मरण हो जावे तो, मोक्ष पँथ पर लग जावे—हमारे ऊपर किसी प्रकार का कष्ट दुख, वैर, इत्यादि से उपसर्ग हो, सब धैर्यता से सहो, प्रभू का स्मर्ण करो ईश्वर के सहस्र नाम है। शिव, विष्णु ब्रह्म, सिद्ध, इत्यादि जो तीन लोक के शिखर पर विराजते हैं। लोक आगे लगा देने से शिव लोक विष्णु लोक, ब्रह्म लोक, सिद्ध लोक यह मोक्ष के नाम हो जाते हैं। अन्य स्थान व जीव कोई नहीं—जब धैर्यता से कष्ट, दुख वैर इत्यादि सहोगे, तो अंत में कोई वैसी बात पैदा होगी जो हमारे अमूल्य होवेगी, मेरा यह कई बार का तजरुबा किया हुआ है। कोई चुगली कर या गालियां भी दवे तो धर्म ध्यान पूर्वक सहो शांत रहो। उस ही को आत्मा, जिव्हा खराब होवेगी उस ही के सर पर पाप (गुनाह) सवार होवेगा। प्रत्यक्ष प्रमाण है कि जो कोई अपना मुह दूसरे की तरफ टेढ़ा करेगा, तो दर्पण से, उस ही का टेढ़ा दीखेगा। और लोकापवाद होगा और उसका दुःख फल यही भोगेगा। शांत धैर्य पूर्वक, सुनने वाले को कम निर्जरा होगी। शांतता, और गुण बढ़ेंगे, लोक प्रशंसनीय होगा यदि शांतता न धारण करोगे तो दोनों समान हो जावोगे। किसी कवि ने कहा है कि——

पूर्व शोक जब जो आपडे, सो धैर्य पूर्वक सब सहो।
होगी सफलता क्यों नहीं, कर्तव्य पथ पर दृढ़ रहो॥

१९—बहुवीजे का स्वरूप।

गूदे की अपेक्षा बीज ज्यादा और एकदम गिरपडे और बीज के, बीच में पुट (छिलका) न होवे और एक घरमें रहते हों सो बहुबीजा जान लेना—(सूखे फलोंमें दोष नहीं)

बहुबीजे के फल।

अफीम का डोडा, गोलों लाल मिरच, तिजारा, पोस्त, धतूरा सत्यानासी, एरंड खरबूजा, पपीतो, इलायची हरी —

२०—जैन धर्म उद्योत करने के मुख्य उपायं।

दान चार प्रकार में, शास्त्र दान प्रधान ।
अष्ट कर्म को नष्ट कर पावे मोक्ष निदान ॥
धर्म करत संसार सुख, धर्म करत निर्वान।
धर्म पथ साधे विना, नर तिर्यंच समान ॥

(अ) स्थानीय और भारतवर्षीय जैन अजैन समाजों में जैन धर्म की प्राचीनता प्रगट कर आत्म सुख का सच्चा उपाय बताना।

(ब) सर्व प्रकार के ग्रन्थों का संग्रह कर स्थानीय व ग्रामादि समाज में स्वाध्याय प्रचार करना। तथा भारतवर्षीय जैन समाज में षटकर्म रूपी नियमावली प्रकाशित कर स्वाध्याय व धर्म प्रचारार्थ बिना मूल्य वितरण करना।

(स) जैन समाजकी अशिक्षित स्त्रियों में विद्या प्रचारार्थ हिंदी पुस्तकें विना मूल्य बांट कर आत्म हित पर लाना।

(उ) अमूल्य जैन ग्रन्थ व पुस्तकें प्रकाश कर विना मूल्य बांटना और मासिक पत्र को भारत वर्षीय जैन समाज को विना मूल्य भेजना।

(ई) बालकों के धर्म शिक्षार्थ पाठशालायें खुलवाना।

२२—दो घड़ी (४८ मिनट) में ३७७३ स्वास होते हैं

२३—विचारने योग्य प्रश्न।

(अ) इस प्रश्न पर रोज विचार करो कि मैं कौन हूं ?

(ब) नर देह बड़ी कठिनता से प्राप्त होती है । इसे विषय भोगों में व्यर्थ मत खोओ। परोपकार एवं आत्म कल्याण में लगाओ।

(स) सब जीवों से मैत्री भाव रक्खो।

(ड) मैं ज्ञानमयी चैतन्य हूं।

(ई) देह मेरी नहीं, जड़ है।

(फ) पर वस्तु (मात पिता स्त्री, भ्राता पुत्र पुत्री इत्यादि कुटुम्बी जन, द्रव्य, महल, मकान, जमीन, शरीर जिसमें अपना चैतन्य रम रहा है, इत्यादि में आपा मत मानो। मानना दुखदाई है।

(ज)शुद्ध खान पान करना। सादा आहार, वस्त्र, चाल चलन ठीक रखना व कुसङ्गतिया से बचना मनुष्य का कर्तव्य है।

(ह) जीव मात्रकी रक्षा करो।

२४—प्रत्येक ग्राम नगर में यह अमृत रूपी धर्मोपदेश जैन अजैन भाइयों की सभा कर प्रति मास सुनाना चाहिये ।

२५—यह पुस्तक प्रत्येक जैन मंदिर, उपदेशक, सभाओं धर्म प्रेमी, सरस्वती (जिनवाणी) भंडार में रखना चाहिये।

२६—अहिंसा परमो धर्म । यतो धर्म ततो जय । धर्मात्माओं के बिना, धर्म अन्यत्र कहीं नहीं पाया जा सकता है ।

२७—गृहस्थ के कर्तव्य ।

१—सर्वज्ञ वीतराग देव की पूजा निर्ग्रंथ गुरु की उपासना स्वाध्याय, समय, तप और दान नित्य प्रति करना।

२—मधु मांस और मद्य के सर्वथा त्याग और हिंसा झूठ चोरी कुशील और परिग्रह का एक देश त्याग करना।

३—मिथ्यात्व, सप्तव्यसन, अन्याय, अभक्ष्य का, सर्वथा त्याग कर पंच अणुव्रतोंके पालनमें जैनियोंको तत्पर रहकर नरभव सफल करना चाहिये।

जैनियों के चिन्ह।

१—जिन दर्शन करना, जल छानकर पीना और रात्रि भोजन त्याग करना।

२९—पढ़ने योग्य शास्त्र।

वीतराग सर्वज्ञ कथित जो। तत्त्व अतत्त्व प्रकाशक हो।
रहित विरोध पूर्वापर हो। मिथ्यामत का नाशक हो॥ १॥
नहीं उलथ सके परवादी। धर्म अहिंसा भासक हो।
आत्मोन्नति का मार्ग विधायक शास्त्र हमारा शासक हो॥ २॥

३०—उद्देश।

हर एक के साथ भाईयाना वर्ताव करते हुए मनुष्य मात्रकी सेवा कर जैन धर्म का प्रचार करना।

नोट—"जिन" सन्सकृत में जीतने वाले को कहते हैं यानी जिसने क्षुधादि १८ दोष जीत लिये वह जिनेन्द्र सर्वज्ञ हितोपदेशक, का कथित धर्मोपदेश, उसको "जैन धर्म कहते हैं।

३१—नीति वाक्य।

Be just & fear not "मुनसिफ हो डरो मत"।
Be good & do good "नेकी करो नेक रहो"।
Plain living & high thinking "सरल आचार उच्च विचार"।
Love your King & do your duty "अपने राजा बादशाह से महोब्बत करो और अपना फर्ज अदा करो"।

३२—कोई प्रश्न करे कि सम्यग्दृष्टी अथवा सम्यक्त्वी की क्या पहिचान? उसका समाधान पं० भूदरदासजी ने चर्चा

समाधान ग्रन्थ चर्चा नं० १७ में इस प्रकार किया है "यश तिलक नाम काव्य विषै पुरुष के चार वाह्य लक्षण कहे हैं । चार ही सम्यक्त के कहे हैं—यानी स्त्रीजन के संभोग करि । बेटा बेटी कें उपजावने करि * विपती विषै धीर्य भाव सों * आरम्भ कार्य के निरवाह से * इन चार चिन्ह करि पुरुषकी अतीन्द्रिय पुरुष शक्ति जानी जावै है तैस ही शान्त भाव * संवेग भाव * दया भाव * आस्तिक्य भाव * इन चारौं अव्यभिचारी भावनसों सम्यक्त रत्न जाना जावैहै—यानी

१—क्रोधादि रहित सम भाव को शान्त भाव कहिये ।

२—कोमलता युक्त परिणाम को दया भाव कहिये ।

३—धर्म, धर्म के फल विषै प्रीति होय तथा देह भोग सों उदासीनता होय जिसे संवेग भाव कहिये ।

४—आप्तागम पदार्थ विषै नास्ति बुद्धि न होय जिसे आस्तिक भाव कहिये ।

यह चारों भाव कभी विभचरैं नहीं। विकार रूप न होवें यह सम्यक्दृष्टी का वाह्य लक्षण है ।

नोट—जिसने सम्यक्त ग्रहण कर लिया उसके हाथ में चिन्तामणि है । घनमें कामधेनु जिसके घरमें कल्पवृक्ष है उसके अन्य क्या प्रार्थना की आवश्यकता है । कल्पवृक्ष कामधेनु चिंतामणि तो कहने मात्र है । सम्यक्तव ही कल्पवृक्ष कामधेनु चिंतामणि है यह जानना (परमात्म प्रकाश श्लोक १४१ से उद्धृत)

३३—उपदेश ।

१—संसार में अनादि से प्रचलित मिथ्यामतों के जाल से बचने के लिये पहले अपने जैन शास्त्रों को पढ़ो और उनका मनन करो ।

२—स्वाध्याय करने के नियम धारण करो। जैन धर्म प्रचार करने का यही एक उपाय है।

३—अपने जीवके समान समस्त जीवों को जानो।

४—दूसरों के दुखों को दूर करने के लिये हर तरह से तयार रहो।

५—जैन धर्म का उपदेश संसार के समस्त जीवों के कल्याण के लिये है। यह किसी एक समुदाय विशेष का ही धर्म नहीं है। इसलिये इसका प्रचार जगत भरमें करदो।

६—अपने से कोई बात शास्त्र विरुद्ध भूलसे कही जाय तो उस भूल को हर समय स्वीकार करलो। झूठा पक्ष मत करो।

७—प्रत्येक नगर में जैन सभा, जैन पाठशाला और जैन पुस्तकालय की स्थापना करदो। और अपने नवयुवक जैन अजैन भाइयों को धर्मानुराग कराते रहो —

३४—जैन धर्म के सिद्धान्त।

(१) जैन धर्म आत्मा का निज स्वभाव है।

(२) संसारी आत्माही मिथ्यात्व रागद्वेषादि भावों का नाशकर अपनी सम्पूर्ण कर्मरूपी, माया से अलिप्त हो परमात्म अवस्था को प्राप्त कर लोक शिखर पर अनंतकाल के शुद्धात्माओं की अवगाहना में ही एक क्षेत्रावगाह रूप स्थित हो अनन्त काल तक अनंत सुखमें मग्न रहा करता है।

(३) पूर्वोक्त परमात्म पद के अविनाशी सुख में प्राप्त होने का अहिंसामयी उपदेश जैन धर्म से ही मिलता है और वह अहिंसा, राग द्वेषादिक भावों से प्राणों का घात न करना ही है।

(४) संसार में अहिंसामयी वीतराग विज्ञानता ही सार भूतहै अतः उसको प्राप्त करनेके लिये वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी की ही उपासना करना योग्य है।

(५) जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन छ द्रव्यों मय जगत अनादि सिद्ध है।

(६) जीवात्मा से नितान्त भिन्न कोई एक परमात्मा नहीं है।

३७—दीर्घ चेतावनी।

बुद्धी वैभव बढ़ाने के लिए राग द्वेष क्रोधादि द्वारा अन्याय विरुद्ध आचरण हमें न करना चाहिए। हम जिन जिन के आधीन हैं उनकी न्याय पूर्वक फरमाबरदारी में रहे। अथवा जो जो हमारे आधीन हैं उनपर दयाभाव रखना उचित है।

३८ अ—हमारा हृदय से भावना व आशीर्वाद है कि श्रीमान महोदय महामान्य सम्राट पंचम जार्ज, बृटिश सरकार का समस्त पृथ्वी पर अटल राज्य हो, कि जिन के राज्य में हम पूर्ण स्वतंत्रता पूर्वक धर्म साधन व धर्मोन्नति करते हैं। व श्रीमान महोदय वायसराय, हिज एक्सेलेंसी गवर्नर जनरल हिंद, हिज एक्सेलेंसी गवर्नर, संयुक्त प्रांत United Province और श्रीमान महोदय कलक्टर साहब बहादुर जिले *अलीगढ़ न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट साहब व तहसीलदारजी साहब * हाथरस को अनेक कोटिशः हार्दिक धन्यवाद है कि वे हम दिगम्बर जैनियों की हर तरह से हिफाजत दरख्त रेख करते हैं। तथा धर्म साधन में हर्ष पूर्वक मदद देते हैं।

नोट—*जो वक्ता जिस स्थान का हो, वह वहां के स्थानों को पढ़ें।

स—अब मैं अंतिम शुद्ध मङ्गल भजन करके अपने स्थान पर प्रस्थान होता हूं। जो कुछ भी प्रमाद व अज्ञानता वस, मुझसे गलतियां व अशुद्धी हुई हों, उनके लिए जिनवाणी से क्षमा प्रार्थी हूं। तथा जो २ पण्डित चतुर विद्वजन हों, मुझ मंद बुद्धि पर क्षमा भाव कर, सुधार करेंगे। मैंने तो, केवल, भक्ति व धर्म साधन वश यह धर्मोपदेश लिखा है यद्यपि मैं असमर्थ हूं जैसे बालक चन्द्रमा को पकड़ना चाहे।

३९—मेरी भावना व निवेदन (नमः सिद्धेभ्य)

सब प्राणी मात्र, शक्ति प्रमाण यथा धर्म शास्त्रोक्त रीति पर धारण करो। ज्ञानी बनो ज्ञान वान होने का निमित्त करना मनुष्य पर्याय को ही है इसलिये कोई पुरुष व स्त्री स्वाध्याय

और नहीं रहना, नित्य करना। यम नेम अवश्य करना॥ श्रावक, श्राविका व्रत ग्रहण करें। यदि शक्ति और पौरुष ठीक हो तो शास्त्र का मनन कर द्रव्य क्षेत्र, काल भाव अनुकूल हो, तो गृहचर्य त्याग, मुनि व्रत ग्रहण कर अपना और दूसरों का कल्याण करिये वरना ग्रहस्थावस्था में ही जो कुछ बने करते रहो। अपने और दूसरों को पहिचाना। सब जीवात्मा आत्मशक्ति अपेक्षा समान हैं, तिल मात्र भी फर्क नहीं है। कर्मापेक्षा भिन्नता है।

नोट—स्वाध्याय करने के पांच भेद हैं, पढ़ना, सुनना, उपदेश देना, मनन करना, प्रश्न करना, सो जिस जीव को जैसी शक्ति हो, ग्रहण करें। पढ़ २ शास्त्र को खुद पढ़ने व सुनने से यह और पूर्ण अवस्था का मार्ग होता है।

४०— आत्मज्ञान माला

बागा में तू न जारे चेतन, घट ही में फुलवार हो ॥टेक॥

ज्ञान गुलाब चरित्र चमन्नी, विनय वेल सुविचार हो ॥
चरचा चम्पा महक रह्यो है, मरवा मोह निवार हो ॥ १ ॥
रायबेल सिर सरदा सोहै, शील शिरोमण थार हो।
काई कुमत जहां तहा विगसत, देखत सुमत निवार हो ॥२॥
समकित माली विवेक बेल ज्यों, आतम रोप निहार हो।
क्यारी क्षमा जहा तहा सोहे, सींचत अमृत धार हो ॥३॥
बहु विध कर यह वृक्ष फलो है, दशधा फल लागी डार हो।
धन्य पुरुष जिन बाग निहारो, अब चल देख बहार हो ॥४॥

४१—भाई से भाई की प्रीति । भजन ।

हुक्म हमको पिताजी का बजाना ही मुनासिब है ।
अवध का छोड़कर जङ्गल में जाना ही मुनासिब है ॥टेक॥
नहीं है रोष का मौका सुनो लक्ष्मण मेरे भाई ।
मात केकई के आगे सर झुकाना ही मुनासिब है ॥ १ ॥
अवध के तख्त पर अबतो नहीं बैठूगा मैं हरगिज।
ताज मेरा, भरत के सर सजाना ही मुनासिब है ॥२॥
धनुष तुम ने जो बिरथा पर चढ़ाया है बिना समझे ॥
धनुष को चाप से बेशक हटाना ही मुनासिब है ॥ ३ ॥
राज के वास्ते, भाई न भाई से, लड़ेंगे हम ।
वचन राजा का अब हमको निभाना ही मुनासिब है ॥४॥
हुआ भारत सभी गारत पड़ी जो फूट आपस में ।
कहे वामन फूट को अब मिटाना ही मुनासिब है ॥ ५ ॥
श्री जिनेंद्र पद समझते, होई सब सुख सच ।
करम भरम संबंध का, कारन रहे न रंच ॥

४२—श्लोक (अंतिम प्रार्थना)

धन्येयं पृथिवी तथैव जनता धन्यादच देशोप्ययं,
धन्या वत्सर मास पक्षदिवसा धन्या: क्षणोऽयं च न ।
यत्रास्माभिरसौ परस्परमभिप्रीत्या च सौहृदयंधन ।
सद्धृत्या स्थितिमाश्रयन्त परमो धर्मो निज प्रस्तुत ॥

अर्थ—धन्य है यह पृथ्वी, धन्य है यह मंडल, धन्य है य
देश, धन्य है यह वर्ष, धन्य है मास, धन्य है यह पक्ष, धन्य
यह दिन, धन्य है यह क्षण जिस में आपसें सब भाई एकत्रि
होकर परस्पर प्रेम पूर्वक धार्मिक प्रस्ताव करते हैं ।

बोलो—जैन धर्म की जय —

जिन सेवक—द्वारकाप्रसाद जैन C. h. (गोत्र कोलभंडारी

जैसवाल—उपरोचिया—इक्ष्वाकुवंश हाथरस निवासी,
सभापति श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा व पो० मास्टर सांभर है
(हैड ऑफिस) राजपूताना (मई १९२५ ई०)

औषधिदान।

श्रीमती स्वर्गीय भगवान देवी जैन पारमार्थिक औषधालय (स्थापित वीर सम्वत २४५१) हाथरस यू० पी० के।

१ उद्देश—शुद्ध औषधी और औषधिदान का सर्वत्र प्रचार कर रोगी दुखी जनो की पीडा दूर करना।

२ नियम—धर्म रहे अरु धन बचे, रोग समूल नसाय।

यह सुख शीघ्र उठाइये शुद्ध औषधी खाय॥
शरीर की निरोगता पुरुषार्थ साधन सेतु है।
कंचन सुगंधित देह का निर्माण औषधि हेतु है॥
दान औषधि पुण्य यश कर बचें रूप धन प्राण है।
जगमें शिरोमणि नर वही जो देत जीवन दान है॥
धर्मार्थ खोला—औषधालय सभ्य दृष्टी दीजिए॥
शुभ द्रव्यदेकर आप अपना यश उपार्जन कीजिए॥
जो वीर दानी दानसे इसको समुन्नति देइ गे।
वे पद व फोटो से विभूषित होइ गे पुनि होइ गे॥

३—सर्व औषधि व नुस्खे मुफ्त। वैद्यजी बिनाफीस असमर्थ रोगी का देखते हैं।

४—स्थापित ता० २८ मई १९२५ से ३१ जनवरी १९२६ तक २५२० रोगियों को दवाएँ दीगई जिनमें से २३७७ को आराम हुआ।

५—आर्थिक मासिक सहायता की छपी रसीद दी जाती है। विवरण प्रतिमास जैन समाचार पत्रों में व वार्षिक रिपोर्ट में छपकर प्रकाशित होता है।

६—जो निम्न लिखित सहायता देंगे उन्हें नीचे लिखे पदों से विभूषित कर उन के फोटो औषधालय में सुशोभित किए जावेंगे और प्राप्त द्रव्य औषधालय के कार्य में लगाया जावेगा।

मूल संस्थापक	१ दो	२५०००)	जैन जाति रत्न
संस्थापक	५ दो	१००००)	जैन जाति वीर
मुख्य संरक्षक	१ हो	६०००)	जैन बंधु
संरक्षक	१० हो	८०००)	जैन हितैषी
मुख्य सहायक	२५ दो	१०००)	धर्मात्मा

४१–भाई से भाई की प्रीति । भजन ।

हुक्म हमको पिताजी का बजाना ही मुनासिब है ।
अवध को छोड़कर जङ्गल में जाना ही मुनासिब है ॥टेक॥
नहीं है रोश को मौका सुनो लछमन मेरे भाई ।
मात कैकई के आगे सर झुकाना ही मुनासिब है ॥ १ ॥
अवध के तख्त पर अबतो नहीं बैठूंगा मैं हरगिज।
ताज मेरा, भरत के सर सजाना ही मुनासिब है ॥२॥
धनुष तुम ने जो चिल्ले पर चढ़ाया है बिना समझे ॥
धनुष को चाप से वरदा हटाना ही मुनासिब है ॥ ३ ॥
राज के वास्ते, भाई से भाई से, लड़ेंगे हम ।
वचन दादा का अब हमको निभाना ही मुनासिब है ॥४॥
हुआ भारत सभी गारत पड़ी जो फूट आपस में।
कहें वामत फूट को अब मिटाना ही मुनासिब है ॥ ५ ॥
श्री जिनेंद्र पद ममनतें, होइ सब शुभ सच।
करम भरम संबंध का, कारन रहै न रंच ॥

४२–श्लोक (अंतिम प्रार्थना)

धन्यैषं पृथिवी तथैव जनता धन्याश्च वंशोऽन्वय,
धन्या वत्सर मास पक्षदिवसा धन्यः क्षणोऽयं च न ।
यत्रास्माभिरसौ परस्परममिमीलया च सोदयकन।
सहल्या स्थितिमादरस्य परमो धर्मो निज प्रस्तुत ॥

अर्थ—धन्य है यह पृथ्वी, धन्य है यह मंडल, धन्य है यह देश, धन्य है यह वर्ष, धन्य है मास, धन्य है यह पक्ष, धन्य है यह दिन, धन्य है यह समय जिस में अपने सब भाई एकत्रित होकर परस्पर प्रेम पूर्वक धार्मिक प्रस्ताव करते हैं ।

बोलो–जैन धर्म की जय —

जिन सेवक–द्वारकाप्रसाद जैन C. K. (गोत्र कोलभंडारी)
जैसवाल–क्षत्रीय–इक्ष्वाकुवंश द्वा[illegible] निवासी,
सभापति श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा [illegible] सांभर,
(हैड औफिस) राजपूताना ([illegible] ई०)

सहायक	३० हों		
मुख्य पोषक	२५ हों	५००)	
पोषक		१०१)	
		१ से १००)	

स्त्री समाज ।

मूल संस्थापिका	१ हों	१५०००)	
संस्थापिका	५ हों	५०००)	
मुख्य संरक्षिका	३ हों	३०००)	
रक्षिका	७ हों	२०००)	जैन महिला
मुख्य सहायिका	१० हों	१०००)	धर्मज्ञ
सहायिका	७५ हों	५००)	उदार चित्त
मुख्य पोषिका	२५ हों	१००)	श्रीमती
पोषिका		१ से ९९) तक	

७—सर्व जैन समाज भी योग्य पदों से विभूषित किए जायगे।

८—इस औषधालय को ५२) रुपये की मासिक जरूरत है श्रीमा भगवानदेवी ने २०००) का ध्रौव्य फण्ड में दान किया है जि का आमदनी ब्याज में सिर्फ १५) मासिक है इस लिए द्र के अभाव से पूर्ण रूप में कार्य चालू होना असम्भव है। देखि श्रीमती औषधिदान का प्रभाव में चली गईं और वही पु यश ले गईं।

हमें अपने जीवन का एक पल का भी भरोसा करना यो नहीं और धर्म साधन में तत्पर रहना चाहिए।

९—इस औषधालय के संरक्षक व ट्रस्टीज श्रीमती लक्ष्मीदेवी जैन रईसा और श्रीमान कुँवर महाराजसिंहजी जिन्दलसिंह जैन रईस जमींदार सासनीझ हैं।

१०—प्रबंधक श्रीमान बाबू चतुर्भुज जी जैन गवर्मेंट पेंशन द्वारकाप्रसाद, हीरालाल जैन पोस्टमास्टर, सुशीलाल जैन B Sc (ENG) P C I (BIR) इन्जीनियर तथा निर्म प्रयत्नशील श्री महावीर दि० जैन मन्दिर हाथरस हैं।

समाज हितैषी—

द्वारकाप्रसाद जैन,

मैनेजर व कोषाध्यक्ष

श्रीमती भगवानदेवी जैन पारमार्थिक औषधालय

हाथरस (जिला अलीगढ़) यू० पी०

HATHRAS U.P.